९।३

पुस्तकालय,

श्री सौम्य काशीस विश्वनाथो विजयतेतराम्

* उत्तरकाशी महात्म्य *

[भाषा टीका सहित]

प्रकाशक:—
तीर्थपुरोहित पं० सूरतराम जोशी
रजिस्टर्ड वैद्य, हितचिन्तक आयुर्वेदिक औषधालय
उत्तरकाशी, टिहरी गढ़वाल।

द्वितीय संस्करण—   १०००

* समर्पण *

श्री १०८ बाबा कालीकमली वाला पंचायत क्षेत्र ऋषिकेश (देहरादून) जो विगत लगभग ८० वर्षों से जनता-जनार्दन साधू-महात्माओं एवं अभ्यागतों अतिथियों आदि की अपूर्व सेवा करता आ रहा है। जिसके कार्य कलाप उत्तराखण्ड में ८५ धर्म-शालाओं का संचालन करना व यात्रियों की निस्वार्थ भाव से सेवा करना रोगियों को निशुल्क औषधि वितरण करना, भिन्न २ स्थानों पर सदावर्तों एवं प्याऊओं का प्रबन्ध करने के साथ ही साथ लगभग २००० महात्माओं, विद्यार्थियों व विधवाओं, अनाथों आदि की दैनिक सेवा करता आ रहा है। उसके संस्थापक ब्रह्मलीन श्री १०८ स्वामी विशुद्धानन्द जी महाराज [बाबा-काली कमली वाले] के चरणों में मैं अपनी श्रद्धाञ्जली अर्पित करते हुये परमात्मा से प्रार्थना करता हूं कि ऐसी संस्था द्वारा जनता जनार्दन एवं दरिद्र नारायण की सेवा अधिकाधिक होती रहे और दानी महानुभाव भी अपना सात्विक दान संस्था को देकर अक्षय पुण्य के भागी बनें।

भवदीयः—

पं० सूरतराम जी जोशी वैद्य

तीर्थ पुरोहित, उत्तरकाशी।

रजिस्टर्ड हितचिन्तक आयुर्वेद औषधालय,

उत्तरकाशी, टिहरी गढ़वाल।

श्री १०८ ईश्वर मठ
पुस्तकालय,

भूमिका

जयत्त्युत्तरकाशीति सौम्यकाशीति च श्रुतम्! क्षेत्रं गोत्र कुलोत्तंसं हिमवन्मध्य संस्थितम् ॥ पञ्चक्रोशविशंकटंवरुणया चास्या च संवेष्टितं भूभृद्भूषणवारणावतनितं बालं वियद्भ्राजते। गङ्गा यत्र च गायतीव मधुरं सामोर्मितुङ्ग स्वनै स्तप्यन्ते च तपो विष्तृष्ण मतयो यत्रोल्वणं साधवः॥ तत्रास्ते विश्वनाथः श्री–शक्त्यादिसहितः प्रभुः। यत्र श्रीविमलेश्वरोद्रिशिखरे सिद्धप्रदो योगिनाम्। कालिन्दी मणिकर्णिकेश्वरयुतो गङ्गापिराराजते॥ ढुंढीशोऽथ गजाननोद्रितनयायुक्तोमहेशः स्वराट्। शक्तिर्धातुमयी हि यस्य पुरतश्चोपासकाभीष्टदा॥ दुर्गाऽन्नपूर्णा मुनिजामदग्न्यः श्रीभैरवश्चाप्यवधूत दत्तः। गोपेश्वरः साधुनिषेवितश्च कोटेश्वेरौनेकविभूति युक्तः॥ केदारेशो ब्रह्मलिंगसिद्धो यो भरतो जडः। रुद्रेश्वरश्च रामेशो ज्ञानवापीश्वरस्तथा। पूर्वे लक्षेश्वरो देवो याम्ये कालेश्वरः शिवः पश्चिमे वरुणेशश्च सौम्ये च शिखरेश्वरः एतेषां दर्शनात्पुण्यं सौम्य काश्यां हि सर्वदा॥

भारतवर्ष के तीर्थ स्थानों में उत्तरकाशी एक प्रधान तीर्थ स्थान है। यह स्थान पतित पावनी श्री गंगा भागीरथी जी के परम पुनीत तट पर वारुणावत् पर्वत की गोद, गंगा यमुना के मध्यवर्ती हिमालय में विद्यमान है। प्राचीन ग्रन्थों में सौम्य वाराणसी नाम से इस स्थान का विस्तृत वर्णन और महात्म्य पाया जाता है।

एक समय देवर्षि नारद जी ने अनेक ऋषि महात्माओं की प्रेरणा से कलु-कलुषित जीवों के उद्धार के निमित्त श्री स्कन्द जी

से प्रार्थना की, प्रभो ! कलियुग में कलु के प्रभाव से पतित जीवों के उद्धार का सबसे सरल और सुगम उपाय क्या है ? नारद जी की प्रार्थना पर महर्षि स्कन्द जी ने इस मार्मिक प्रश्न का उत्तर देते हुए पाप ग्रसित प्राणियों के निस्तार का उपाय बतलाया। जिसका विस्तृत वर्णन स्कन्द पुराणान्तर्गत केदार खण्ड अध्याय ६३।६४।६५ में है उसी माहात्म्य को सर्व साधारण की जानकारी के लिये सरल भाषा में उधृत कर प्रकाशित करता हूं।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भी यह स्थान विशेष महत्व का है। इस अनन्य त्रिशूलक क्षेत्र में आदि शंकराचार्य जी ने मोक्ष सिद्धि प्राप्त की। जड़ भरत जी ने यहीं पर समाधी ली। श्री स्वामी रामतीर्थ जी आदि को यहीं पर ही ब्रह्म साक्षात्कार हुआ।

ग्रन्थ का विषय तथा लक्षित तीर्थ इतना उपयोगी है कि संक्षेप में मुक्ति-स्थान प्रदिपिका कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। पाठक ग्रन्थ का आद्योपान्त अवलोकन कर मुक्त कण्ठ से प्रशंसा किये बिना न रहेंगे कि जिन्होंने कलु--कलुषित हीन प्राणियों के मंगलार्थ ऐसे पुण्य तीर्थ का परिचय दिया है। इस पुस्तक में उत्तराखण्ड मार्ग प्रदर्शिका भी यात्रियों के सुभीते के लिये संलग्न की गई है।

विनीत—

तीर्थ पुरोहित वैद्य सूरतराम जोशी, रजिस्टर्ड
हितचिन्तक आयुर्वेदिक वैद्य भूषण
उत्तरकाशी, टिहरी गढ़वाल।

श्री १००८ ईश्वर मठ पुस्तकालय, उ० ... १२१
श्री गणेशायनमः
दू
220

अथ उत्तरकाशी महात्म्य प्रारम्भ

ॐ नमःपरमात्मने

* ऋषयऊचः *

सूत सर्वपुराणानां वक्ता त्वं हि माहाशयः।
शप्तान् श्रुत्वा तु निर्मुक्तान् कोटिशो ब्रह्मराक्षसान् ॥ १
गंगोत्पंत्ति विशेषण तथा राज्ञां महान्वयम्।
तीर्थानां चैव माहात्म्यं किमपृच्छत्पुनर्मुनिः ॥ २

❋ सूत उवाच ❋

श्रुत्वा कैलाशमाहात्म्यं संक्षेपेण पुनर्द्विजाः।
विशेषतः प्रष्टुकामः स्कंन्दं प्रोवाच नारदः ॥ ३

❋ नारद उवाच ❋

कृष्णवर्त्मज देवेश जगज्जनक सेवक।
निर्गलत्वन्मुखांभोजात्पिवतो वचनामृतम् ॥ ४

तृप्तिर्न जायते स्वामिन् पिपासा वर्द्धतेऽधुना ।
क्षेत्राणां सुवहूनां च वैभवः कथितः श्रुतः ॥ ५
अधुना श्रोतुमिच्छामि सुसारं हिमवद्गिरौ ।
तथा कथितक्षेत्रेभ्योऽधिकं क्षेत्रं वदस्व मे ॥ ६

अथ श्रीस्कन्द पुराणान्तर्गत केदारखण्डे पवित्रतमोत्तरकाशी-
पुण्यक्षेत्रमहात्म्यभाषा टीका प्रारम्भते ।

उत्तरकाशी के महात्म्य को सुनने की इच्छा से नैमिषारण्य क्षेत्र में शौनकादि ऋषि सूत जी से बोले – हे उदार बुद्धि वाले सूत जी ! आप सब पुराणों के वक्ता हो, इसलिये यह बतलाइये कि करोड़ों ब्रह्मराक्षस जिनको अत्युग्र कर्म के कारण शाप हुआ था उनको शाप से मुक्त हुये सुनकर ॥ १ ॥ और गंगा जी की उत्पति तथा राजाओं के वंश के चरित्र को और तीर्थों के महात्म्य को सुन कर के नारद मुनि ने स्कन्द जी से फिर क्या पूछा ॥ २ ॥ सूत जी बोले हे ऋषियो ! कैलाश के महात्म्य को संक्षेप से सुन कर पुनः विशेष से पूछने की इच्छा करके नारद जी स्कन्द जी से कहने लगे ॥ ३ ॥ नारद जी बोले हे अग्नि के पुत्र संसार के उत्पन्न करने वाले शिवजी के सेवक स्कन्द जी ! आपके मुख-कमल से निकलते हुये वचन रूप अमृत को पान करते हुये भी । ४ । हे स्वामिन ! तृप्ति नहीं होती किन्तु प्यास बढ़ती जाती है । बहुत से क्षेत्रों का महात्म्य जो आपने कहा वह हमने सब सुना ॥ ५ ॥ अब मैं हिमालय में सारभूत जो क्षेत्र है वह सुनना चाहता हूँ । पहले कहे हुये तीर्थों में जो अधिक फल देने वाला हो वह तीर्थ आप हम को कहो ॥ ६ ॥

यन्न कस्मै चिदाख्यातं कलौ मुक्तिप्रदायकं ।
न यज्ञैर्न तपोभिश्च नैवो पोषणकव्रतैः ॥ ७
महादानैर्न चायासैः पुण्यं यद् भवति प्रभो ।
स्वल्पायासेन मुक्तिश्च सर्वैश्वर्यं भवेत्पुनः ॥ ८

॥ स्कन्द उवाच ॥

रहस्यातिरहस्यं च तत्क्षेत्रं वक्तुमर्हसि ।
अस्ति गुह्यतमं क्षेत्रं सारात्सारतरं परम् ॥ ९
परं गोप्यं परं तत्वं तुषारवच्छिलोच्चये ।
सर्वतीर्थ मयं सर्वदेव जुष्टं सुपुण्यदम ॥ १०
यत्र भागीरथी पुण्या गंगा चोत्तरवाहिनी ।
सौम्यकाशीति विख्याता गिरौ वै वारणावते ॥ ११
असी च वरुणा चैव द्वे नद्यौ पुण्यगोचरे ।
यत्र ब्रह्मा च विष्णुश्च महेशश्चैति ते त्रयः ॥ १२
नित्यं सन्निहिता यत्र मुक्तिक्षेत्रे तथोत्तरे ।
यत्रर्षीणां च स्थानानि आश्रमाश्च तथा शुभाः ॥ १३
यत्रमारकताभासं विभ्रत्येव सदा शिवः ।
निक्षिप्ता यत्र पूर्वं हि संगरे देवतासुरे ॥ १४

जो क्षेत्र आपने अब तक किसी से न कहा हो और कलियुग में मुक्ति का देने वाला हो, जो पुण्य न यज्ञों से न तपस्याओं से और न उपवासादि व्रतों से ॥ ७ ॥ तथा बड़े बड़े दानों से और अनेक उद्यागों से नहीं होता वह पुण्य जिस क्षेत्र में बिना परिश्रम से मिल जाय, हे प्रभो ! जहां सब प्रकार का ऐश्वर्य और मुक्ति भी प्राप्त हो जाय ॥ ८ ॥ ऐसे गुप्त से भी गुप्त क्षेत्र को आप हमारे प्रति कहने के योग्य हों। स्कन्द जी बोले हे नारद ! एक अत्यन्त गुह्य और सार से भी सार अद्भुत क्षेत्र है ॥ ९ ॥ जोकि परम गोपनीय एवं परम तत्व हिमालय प्रदेश में सम्पूर्ण तीर्थों से व्याप्त और अनेक देवताओं से सेवित ऐसा अत्यन्त पुण्य-दायक क्षेत्र है। १० । जहां पवित्र गंगा भागीरथी उत्तर की तरफ बहती है वह सौम्यवाराणसी अर्थात् उत्तरकाशी नामक पुण्यक्षेत्र वारणावत पर्वत के समीप प्रसिद्ध है। ११ । जिस उत्तरकाशी में असी और वरुण यह दो पवित्र नदियां बहती हैं। जहां ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों देवता ।१२। नित्य ही विराजमान रहते हैं और उस मुक्ति क्षेत्र के उत्तर भाग में महर्षियों के स्थान और पवित्र आश्रम हैं। १३ । जहां सदाशिव सदा मरकतमणि की क्रान्ति को धारण करते हैं और पूर्वकाल में देवासुर संग्राम में फैंकी हुई। १४ ।

अद्यापि दृश्यते तत्र शक्तिर्धातुमयी शुभा ।
जमदग्निसुतो यत्र तपस्तेपे सुदुष्करम् ॥ १५
तस्य क्षेत्रस्य माहात्म्यं सावधानोऽवधारय ।
यत्र पुण्यानि तीर्थानि सर्वकामप्रदानि हि ॥ १६
येषां संदर्शनादेव न च भूयोऽभिजायते ।
इयमुत्तरकाशीति प्राणिनां मुक्तिदायिनी ॥ १७

३
२८०

धन्या लोके महाभागाः कलौ येषामिह स्थितिः ।
यत्र सर्वांशभावेन वसन्ते सर्वदेवताः ॥ १८

❋ नारद उवाच ❋

अतिपुण्यतमं स्थानं पापिनामपिमुक्तिदम् ।
हिमालयतटे पुण्ये प्रोक्तं यद्धैत्वयाऽनघ ॥ १९
तस्य क्षेत्रस्य महात्म्यं देव विस्तरतो वद ।
कथं काशीति संजाता पुरी देवपुरोगमा ॥ २०
केन केन तपस्तप्तं के के पुण्यतमाश्रमाः ।
कथं परशुरामेण तपस्तप्तं हिमाचले ॥ २१
महाकाल्या कथं देव पतिता शक्तिरुत्तमा ।
कुत्र मारकतं लिंगं श्रीशिवस्य परात्मनः ॥ २२

सात धातुओं की बनी हुई शक्ति आज भी उस काशी क्षेत्र में दिखाई पड़ती है जहां कि परशुराम जी ने बड़ा उग्र तप किया था ॥ १५ ॥ उस क्षेत्र का माहात्म्य सावधान होकर श्रवण करो, जिसमें अनेक प्रकार के तीर्थ सब कामनाओं के देने वाले हैं ॥ । १६ ॥ जिन क्षेत्रों के दर्शन मात्र से ही पुनर्जन्म नहीं होता है यह उत्तरकाशी क्षेत्र प्राणियों को मुक्ति देने वाला है । १७ । वह मनुष्य संसार में धन्य हैं जिनका कि बड़ा भाग्य है जिनकी कलिकाल में इस क्षेत्र में स्थिति है. जिस काशी क्षेत्र में सम्पूर्ण देवता अपनी सब कामनाओं से निवास करते हैं । १८ । नारदजी बोले हे निष्पाद स्कन्द जी ! जो आपने पवित्र हिमालय के तट

पर पापियों को भी मुक्ति देने वाला अत्यन्त पुण्य स्थान बतलाया है ॥ १६ ॥ हे देव ! उस क्षेत्र के माहात्म्य को आप विस्तार पूर्वक कहो, इन्द्र की पुरी के तुल्य यह काशी किस तरह हुई । २० । किस किस ने यहां तप किया है और कौन कौन से पवित्र आश्रम यहां पर हैं । परशुराम जी ने किस प्रकार उस हिमालय में तप किया । २१ । महाकाली की वह उत्तम शक्ति कैसे स्वर्ग से गिरी और उस परमेश्वर श्री शंकर का मरकतमणि के समान प्रकाशमान स्वयं उत्पन्न हुआ लिंग भी कहां पर है । २२

एतत्सर्वं विस्तरेण पुण्यान्यायतनानि च ।
ब्रूहि स्कन्द ! विशेषेण माहात्म्यं वारणावते ॥ २३
कुत्र पुण्यो महादेवः कुत्र वै वारणावतः ।
धन्योऽस्मि नाथ भगवन् यच्छृणोमि मुखाच्छ्रुतम् । २४
वाक्पीयूषमिदं पुण्यं तृप्तिर्मे न हि जायते ।
त्वत्तः श्रुत्वा परंज्ञानं सिद्धा मुक्तिं समाययुः ॥ २५

॥ स्कान्द उवाच ॥

शृणु नारद वृतान्तं पापघ्नं सर्व कामदम् ।
यथोत्तरस्थिता काशी जातेयं मुक्तिदा नृणाम् ॥ २६
वक्ष्ये तद्विस्तरेणाहं यद्गत्वाऽमृतमश्नुते ।
शप्तां श्रुत्वा पुराकाशीं सर्वेदेवाः सवासवाः ॥ २७
कलावंतर्हिता काशी भविष्यति इति स्फुटम् ।
मुनयश्च महाभागाः संत्रस्ताः मुक्तिलालसाः ॥ २८

उमेशं शरणं जग्मुर्हिमवंतं नगेश्वरम् ।
शतयोजनविस्तीर्णा सभा यत्र विराजिता ॥ २९
प्रमथैः सेव्यमाना च नंद्यादिभिरनुष्ठिता ।
सर्वकामफलोपेता देवकिन्नर सेविता ॥ ३०

हे स्कन्द ! वारणावत पर्वत में जो पुण्य स्थान हैं उनका माहात्म्य और यह वृतान्त विस्तार पूर्वक वर्णन करिये ॥ २३ ॥ वह पवित्र शिवलिंग और वारणावत पर्वत कहा है। हे भगवन ! मैं धन्य हूँ जो कि आपके मुख से निकलते हुये ॥ २४ ॥ बचनामृत को श्रवण करता हूं परन्तु उस पुण्य बचनामृत को श्रवण करते हुये मुझे तृप्ति नहीं होती हैं। सनकादि सिद्ध ऋषि आप से शुद्ध ज्ञान को श्रवण कर मुक्ति को प्राप्त हो गये थे ॥ २५ ॥ स्कन्द जी बोले हे नारद ! सब कामनाओं के देने वाले पाप-नाशक इस वृतान्त को श्रवण करो जिस प्रकार की मुक्ति को देने वाली उत्तरकाशी उत्पन्न हुई है ॥ २६ ॥ वह सब मैं विस्तार पूर्वक कहता हूं जिसको जानकर मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है। पूर्वकाल में इन्द्रादि सब देवताओं ने काशी को शापयुक्त सुनकर ॥ २७ ॥ कलियुग में काशी अवश्य अन्तर्हित हो जावेगी यह विचार कर मुक्ति की इच्छा वाले मुनिजन भयभीत हुये ॥ २८ ॥ और पर्वतराज हिमालय में महादेव की शरण में गये जहां कि सौ योजन तक विस्तीर्ण देवताओं की सभी विराजमान थी ॥ २९ ॥ जो कि बहुत से शिवगण गंगादि नदियों से तथा देवता किन्नरों से सुशोभित और सब कामनाओं से परिपूर्ण था ॥ ३० ॥

अप्सरोभिर्गीयमाना पुण्यकृद्भिः सुगोचरा ।
यत्रास्ते भगवान शंभुः पार्वत्या सहितः प्रभुः ॥ ३१

यत्र सर्वे महा नागा वासुक्याद्याः प्रतिष्ठिता ।
चरणौ सेवितुं शंभोर्भूषण त्वमुपागताः ॥ ३२ ॥

जटाजूटतटद्यत्र जाह्नवी निर्गता शुभा ।
भागीरथनृपाराध्या तच्चक्रपरिगोचरा ॥ ३३

तत्र नत्वा महेशानं दृष्ट्वा देवमुमापतिम् ।
तुष्टुबुर्वाग्भिर्भव्याभि सर्वभूतविमुक्तये ॥ ३४

०— ऋषयऊचुः —०

शंभवे विभवे तुभ्यं व्यापकाय परात्मने ।
भवते भव्यरूपाय नीरूपाय परात्मने ॥ ३५

निरञ्जनाय शुद्धाय ज्ञानरत्नप्रदायिने ।
नमो देवाधिदेवाय देवसेव्याय ते नमः ॥ ३६

नमस्त्रैलोक्यनाथाय नमस्त्रैलोक्यरूपिणे ।
सर्वशक्तिस्वरूपाय निखिलेशाय ते नमः ॥ ३७

पार्वतीयपतये तुभ्यं निराभासाय ते नमः ।
निराध्याय सत्य सूक्ष्माय सूक्ष्मात्सूक्ष्मतराय ते ॥ ३८

जिस सभा में पुण्य करने वाली अप्सरायें गायन कर रही हैं जिसको सुकृत कर्म करने वाले मनुष्य सरलता से देख सकते हैं जहा भगवान शंकर पार्वती के सहित निवास करते हैं ॥ ३१ । जिस सभा में बड़े वासुकि आदि नाग शिवजी के चरण की सेवा करने के लिये भूषण बने हुए हैं ॥ ३२ ॥ राजा भगीरथ की अराधना से उसके रथ के चक्र द्वारा बहने वाली जान्हवी

शिव जी के जटा-जूट से जहां निकली है ॥ ३३ ॥ उस कैलाश पर्वत में जाकर पार्वती पति शङ्कर भगवान को देख कर सम्पूर्ण प्राणियों की मुक्ति के लिये इन्द्रादि देवता अपनी पवित्र वाणी से स्तुति करने लगे ॥ ३४ ॥ ऋषि बोले सर्वशक्तिमान सर्वत्र व्यापक परमात्मा मंगलमय रूप वाले तथा रूप से रहित और निराकार शंकर के लिये नमस्कार है ॥ ३५ ॥ जो कि शुद्ध निरञ्जन ज्ञानरूप रत्न को देने वाले देवों के देव देवताओं से सेवा करने योग्य उस शिव को नमस्कार है ॥ ३६ ॥ तीनों लोकों के स्वामी त्रैलोक्यरूपी सर्वशक्ति स्वरूप सब के ईश्वर आपको नमस्कार है ॥ ३७ ॥ पार्वती के पति आभा से रहित तथा अभ्यास से भी रहित सूक्ष्म से भी सूक्ष्म शिव को नमस्कार है ॥ ३८ ॥

स्थूलात्स्थूलतरायेश नमस्ते जगतीपते ।
जगन्नाथाय जवतां संहारपारिकारिणे ॥ ३९
विकारिणे निरीशाय निरीहाय नमोऽस्तु ते ।
भस्मभूषित देहाय हिमाद्रीपतये नमः ॥ ४०
नमः काशीनिवासाय निराधाराय ते नमः ।
विरुद्धधर्महीनाय नीलकण्ठाय वेधसे ॥ ४१
सृजते पालयित्रे च सर्वसत्वस्वरूपिणे ।
योगिने योगरूढाय योगिनां पतये नमः ॥ ४२

❀ स्कन्द उवाच ❀

इति तेषां स्तुतिं श्रुत्वा दिव्यां वै वेदसम्मिताम् ।
प्रोवाच सन्तुष्टमनाः सर्वान्नृषिगणाञ्छिवः ॥ ४३

❀ ईश्वर उवाच ❀

भो तापसाः किं युष्माकमभीष्टं वदत उत्तमम् ।
किमर्थ मागता ह्यत्र मां स्तोतुं भक्तितत्पराः ॥ ४४
युष्माकमीप्सितं सर्वं पूरयिष्याम्यसंशयम् ।
सत्यं मे वदत क्षिप्रं यद्वो मनसि संस्थितम् ॥ ४५

❀ ऋषय ऊचुः ❀

भगवन सर्वभूतेश कृतार्थाः स्मो वयं किल ।
ये भगवन दृष्टिमार्गं हि प्रापिता भक्तवत्सल ॥ ४६
कलावंतर्हिता काशी इति श्रप्ता किलाऽधुना ।
तत्खेदश्रवणात्प्राप्ता पीडा यत्र समागताः ॥ ४७
कलौ पापसमाविष्टे सर्वधर्मविवर्जिते ।
कथं काशीं विना देव गतिर्नृणां भविष्यति ॥ ४८

जो स्थूल से भी स्थूल है ऐसे समस्त संसार के स्वामी संसार की रचना पालन संहार करने वाले हे ईश ! आपको नमस्कार है ॥ ३९ ॥ विकार करने वाले और प्रपंच विकार से रहित निष्काम तथा भस्म से शोभित शरीर धारी हिमालय के स्वामी शंकर को नमस्कार है ॥ ४० ॥ काशी में निवास करने वाले आधार और विशुद्ध धर्म से रहित नीलकण्ठ ब्रह्म स्वरूप शिवको नमस्कार है ॥ ४१ ॥ संसार के उत्पन्न और पालन करने वाले सर्व प्राणी स्वरूप तथा योग में तत्पर योगियों के पति योगी शिव को नमस्कार है ॥ ४२ ॥ स्कन्द जी बोले—देवताओं की

३/२८०

वेदार्थ युक्त दिव्य स्तुति को सुन कर प्रसन्न चित्त हुए शिव जी सब ऋषियों को कहने लगे ॥ ४३ ॥ शिवजी बोले – हे तपस्वी ऋषियो ! आप लोगों का मनोरथ क्या है शीघ्र कहो आप लोग यहां क्यों आये हो जो भक्ति पूर्वक मेरी स्तुति कर रहे हो । ४४। आपके मनोरथ को मैं पूर्ण कर दूंगा इस में संशय नहीं इसलिये जो आपके मन में है शीघ्र ही हम से कहो ॥ ४५ ॥ ऋषि कहने लगे हे भगवन ! सब प्राणियों के ईश्वर शिव जी ! हम इस समय कृतार्थ हो गये हैं जो आप भक्तवत्सल हमारे दृष्टिगोचर हुए ॥ ४६ ॥ हे देव ! कलियुग में काशी अन्तर्हित होवेगी यह काशी को शाप हुआ है । इस आश्चर्य को सुन कर हम दुःखी हो कर यहां आये हैं ॥ ४७ ॥ पाप से भरे हुए सब धर्म कर्मों से रहित कलियुग में काशी के विना हे देव ! मनुष्यों की गति किस प्रकार होवेगी ॥ ४८ ॥

कथं संसारपाशस्य समुच्छेदो भविष्यति ।
कलौ येषां गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः ॥ ४९

तस्यामन्तर्हितायान्तु कुत्र स्थानं तव प्रभो ।
एतन्नःसंशयं छिंधि यतस्त्वं करुणानिधिः ॥ ५०

❀ ईश्वर उवाच ❀

यदा पापस्य वाहुल्यं यवनाक्रांतभूतलम् ।
भविष्यति तदा विप्रा निवासं हिमवद्गिरो ॥ ५१

काश्या सह करिष्यामि सर्वतीर्थैः समन्वितः ।
अनादिसिद्धं मत्स्थानं वर्त्तते सर्वदैव हि ॥ ५२

यत्र भागीरथी गंगा उत्तराश्रितवाहिनी ।
असी च वरुणा तत्र सन्निधाने सदैव हि ॥ ५३

काश्यां हि यानि तीर्थानि तानि सर्वाणि तत्र हि ।
वर्तते सर्वदा नूनं मुक्ति मुक्तिकराणि च ॥ ५४

अन्येषु तीर्थराजेषु काश्यमपि द्विजोत्तमाः ।
अशांश भावतो विप्रा निवसामि सदाऽनघाः ॥ ५५

केदारमंडले ह्यत्र साकल्येन स्थितिर्मम ।
अस्यास्तु दर्शनादेव मुक्तो भवति मानुषः ॥ ५६

यदि स्यात्पुण्यवशतो मृतिरत्र तु कस्यचित् ।
कृमिकीटपतंगाद्यैः सोऽपि मुक्तो न संशयः ॥ ५७

और संसार बन्धन का छेदन कैसा होगा क्योंकि कलियुग में जिनकी कहीं भी गति नहीं है उन की गति काशी में होती है ॥ ४९ ॥ उस काशी के अन्तर्धान हो जाने पर आपका स्थान कौनसा होगा हे प्रभो ! हमारे इस संशय को दूर कर दीजिये क्योंकि आप दयालु हो ॥ ५० ॥ शिवजी बोले—हे ब्राह्मणों ! जब पृथ्वीतल यवनों से भर जायेगा और पाप की अधिकता होवेगी उस समय हिमालय में मेरा निवास होवेगा ॥ ५१ ॥ उस हिमालय में काशीक्षेत्र के अन्तर्गत सब तीर्थों के साथ में निवास करूंगा वह मेरा स्थान अनादिकाल से सिद्ध है ॥ ५२ ॥ जहां उत्तर की ओर बहने वाली गंगा भागीरथी और असी वरुणा दो नदियां हमेशा निकट में रहती हैं ॥ ५३ ॥ जितने तीर्थ पूर्व-काशी में हैं उतने ही सब तीर्थ भोग मोक्ष को देने वाले उत्तर-काशी में भी हैं ॥ ५४ ॥ हे निष्पाप ब्रह्मणो ! और भी श्रेष्ठ

तीर्थों में तथा पूर्वकाशी में भी अपने अंशरूप से निवास करता हूं ॥ ५५ ॥ परन्तु केदार मण्डल में मेरी सर्वभाव से स्थिति है इस उत्तरकाशी क्षेत्र के दर्शन से ही मनुष्य बन्धनों से छूट जाता है ॥ ५६ ॥ यदि किसी पुण्य योग से कृमिकीट पतंगादि किसी जीव की मृत्यु इस काशी क्षेत्र में हो जाय तो वह भी मुक्त होता है इसमें संशय नहीं ॥ ५७ ॥

यथा काशी तथा ह्येषा मत्पुरी भेद वर्जिता ।
यः कश्चिद्भेदकृल्लोके स याति नरके ध्रुवम् ॥ ५८
अत्र स्नानं तु यो मर्त्यः करोति भाग्य योगतः ।
अच्युतार्काभयानेन स गच्छेना पदं ध्रुवम् ॥ ५९
अस्मिन् क्षेत्रे विलीयंते पापान्यन्यत्र मानुषैः ।
कृतानि स्पर्शमात्रेण महोत्यपि च सुव्रताः ॥ ६०
अस्मिन् क्षेत्रे च यत् पापं करोति मनुजाधमः ।
भ्रमन्पिशाचैः सार्द्धं तु न भूयः पुरुषो भवेत् ॥ ६१
अत्र स्वल्पं च य पापं करोति मनुजः क्वचित् ।
तद्वर्द्धते प्रतिपलं कोटि कोटि गुणं तथा ॥ ६२
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन नास्मिन्पापं समाचरेत् ।
अत्र यो मासमेकं तु ह्यविच्छेदं दृढ़व्रतः ॥ ६३
गंगायां स्नाति यत्पुण्यं वदामि शृणुता द्विजाः ।
इह लोके चिरं स्थित्वा भुक्त्वा भोगानशेषतः ॥ ६४

जैसी पूर्व काशी है ऐसी यह उत्तरकाशी पुरी भी है इन में

कुछ भी भेद नहीं है, संसार में जो मनुष्य भेद समझता है वह अवश्य नरक में जाता है ॥ ५८ ॥ इस उत्तरकाशी क्षेत्र में जो मनुष्य दैवयोग से स्नान करता है वह देह त्यागने पर दस हजार सूर्यों के समान कांति वाले विमान से मेरे अविनाशी पद शिवलोक को जाता है ॥ ५६ ॥ अन्य स्थानों में किये हुये मनुष्यों के पाप इस क्षेत्र में आकर नष्ट हो जाते हैं। हे अच्छे व्रत करने वाले ऋषियो ! इस काशी क्षेत्र में बड़े २ पाप तीर्थ के स्पर्शमात्र से दूर होते हैं ॥ ६० ॥ इस पुण्य क्षेत्र में आकर जो अधम मनुष्य पाप करता है वह पिशाचों के साथ घूमता हुआ फिर कभी पुरुष नहीं होता है अर्थात् नीच योनि में जाता है। ॥ ६१ ॥ इस तीर्थ में कोई मनुष्य यदि थोड़ा भी पाप करे तो वह प्रत्येक क्षण में बढ़ता हुआ करोड़ गुणा हो जाता है ॥ ६२ ॥ इस लिये सब प्रकार से यहाँ कदाचित भी पाप नहीं करना चाहिए। जो मनुष्य यहाँ प्रति दिन दृढ़ संकल्प से नियम पूर्वक एक मास पर्यन्त ॥ ६३ ॥ गंगा स्नान करते हैं हे ब्राह्मणो ! उसका पुण्य मैं आपको कहता हूं वह इस लोक में बहुत काल निवास करके अनेक भोगों को भोग कर ॥ ६४ ॥

कल्पं मदीय लोके तु स्थित्वा भूमौ भवेन्नृपः ।
सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञो धर्मज्ञो बहु दानदः ॥ ६५
पुत्रपौत्रैः परिवृतो धर्मतः सुखभुक तथा ।
अन्ते काश्यां समागत्य मय्येव परिलीयते ॥ ६६
त्रिरात्रमत्रोषित्वा तु पूजयित्वापि मां द्विजाः ।
यत्र कुत्रापि म्रियते स शैवं लोकमाप्नुयात् ॥ ६७
अन्य जन्मनि सोप्यत्र प्राप्नोत्येव मृतिं शुभाम् ॥
तारकं ब्रह्म ह्यत्रैव उपदेक्ष्यामि मानुषे ॥ ६८

प्राणेपूत्क्रममाणेषु येन मुक्तो भवेन्नरः ।
जीव मात्रोपि यः कश्चिदत्र प्राणन् विमुंचति ॥ ६९

स एव जायते लीनो मद्देहे सकलाश्रये ।
विप्राः क्षेत्रं न मुक्तं वै अविमुक्तं ततः स्मृतम् ॥ ७०

जपं दत्तं हुतं तप्तमविमुक्ते किलकाक्षयम् ।
अश्मना चरणौ हत्वा वसेत्काशीन त्यजेत ॥ ७१

मेरे लोक में एक कल्प पर्यन्त निवास करके पुनः पृथ्वी में पुण्य के समाप्त हो जाने पर सब शास्त्रों के तत्व को जानने वाला धर्मात्मा दानी राजा होता है ॥ ६५ ॥ और वह पुत्र पौत्रादि युक्त होकर धर्म पूर्वक सुख भोग करके अन्त में काशी में निवास करके मेरे में लीन हो जाता है ॥ ६६ ॥ हे ब्राह्मणो ! जो मनुष्य तीन रात्रि तक उत्तरकाशी में शिव पूजन करता है और अन्त में वह जहाँ कहीं भी शरीर छोड़ता है अन्त में शिव लोक को जाता है ॥ ६७ ॥ फिर अन्य जन्म में वह इसी क्षेत्र में शुभ मृत्यु पाता है वह मनुष्य मरण काल में मनुष्य देह में ही तारक मन्त्र का उपदेश ग्रहण कर ॥ ६८ ॥ प्राणों के निकलते ही वह मनुष्य मुक्त हो जाता है जो कोई भी जीव मात्र इस तीर्थ में प्राण त्यागता है ॥ ६९ ॥ वह समस्त जगत के आधार मेरे देह में ही लीन होता है । हे ब्राह्मणो इस उत्तर काशी पुण्य क्षेत्र को मैंने कभी नहीं छोड़ा है इस लिये इसका नाम अविमुक्त क्षेत्र है ॥ ७० ॥ अविमुक्त क्षेत्र में यज्ञ दान जप तप जो कुछ भी किया जाय अक्षय हो जाता है । पत्थर से पैरों को काट कर भी काशी में निवास करना चाहिये जिससे काशी नहीं छूटे ॥ ७१ ॥

गुह्यानां परमं गुह्य मेतत्क्षेत्रं परं मम ।
वरणा च नदी चासी तयोर्मध्ये वाराणसी ॥ ७२
अत्र स्नानं जपो होमो मरणं हरपूजनम् ।
श्राद्धं दानं निवासश्च यज्ञः स्याद् भुक्तिमुक्तिदः ॥ ७३
मणिकर्णिकायां स्नात्वा तु यः पितृंस्तर्पयेज्जलैः ।
पितरस्तस्य तृप्ताः स्युर्या वत्कल्पशतं शतम् ॥ ७४
पिंडदानं च ये कुर्युर्विधिवत् पितृतत्पराः ।
उद्धृताः पितरस्तैस्तु कुलमेकोतरं शतम् ॥ ७५
यः कश्चिदेतत्क्षेत्रं तु ह्यवज्ञाय कुबुद्धिमान् ।
अन्यतीर्थं व्रजेत्सोपि रमते कोणपैः सह ॥ ७६
येन केनाप्युपायेन मृतिमिच्छेत तत्र वै ।
अमंगलं जीवितं तु मरणं यत्र मंगलम् ॥ ७७
इतः प्रभृति भो विप्रास्तत्रैव संवसाम्यहम् ।
यावंति काश्यां तीर्थानिं तानि तत्रैव संति च ॥ ७८
बहूना किमि होक्तेन सा मुक्ति कारणं परम् ।
तत्व ज्ञानं विनान्यत्र मुक्तिर्नैवास्ति दुर्लभा ॥ ७९

यह मेरा क्षेत्र गुप्त तीर्थों में भी गुप्त है वरुणा और असी इनके मध्यगत होने के कारण इसको वाराणसी भी कहा जाता है ॥ ७२ ॥ इस तीर्थ स्थान, जप, तप, होम, मरण श्राद्ध, शिव-पूजन, दान यज्ञ काशी निवासादि सत्कर्म भोग मोक्ष को देने वाले हैं ॥ ७३ ॥ जो मनुष्य मणिकर्णिका के तट पर स्नान करके

उस जल से पितरों का तर्पण करे उसके पितृगण सैकड़ों कल्प तक तृप्त रहते हैं ॥ ७४ ॥ जो मनुष्य मणिकर्णिका में पितृपरायण होकर विधि पूर्वक पिंडदान करते हैं उन्होंने अपने एक सौ एक कुल सहित पितरों का उद्धार कर लिया है ॥ ७५ ॥ जो दुर्बुद्धि वाला मनुष्य इस क्षेत्र की अवज्ञा करके दूसरे तीर्थ में जाता है वह राक्षसों के साथ विचरता रहता है ॥ ७६ ॥ मनुष्य को चाहिये कि उस क्षेत्र में जिस किस प्रकार से मृत्यु की इच्छा करें क्योंकि वहाँ जीवित रहना अमङ्गल है और मरण मङ्गल रूप है ॥ ७७ ॥ हे देवताओ ! इस समय से लेकर मैं उसी क्षेत्र में वास करूंगा जितने तीर्थ पूर्वकाशी में हैं उतने ही इस काशी क्षेत्र में भी हैं ॥ ७८ ॥ बहुत कहने से क्या है वह मुक्ति का परम कारण है । अन्य स्थानों में तत्वज्ञान के बिना दुर्लभ जो मुक्ति है वह नहीं प्राप्त हो सकती ॥ ७९ ॥

अत्र सा प्राप्यते देहत्यागेनैव महाव्रताः ।
तस्मादस्मात्पुण्यतममन्यन्नास्तीह भूतले ॥ ८०
केदारमण्डले सारात्सारमेषैव मत्पुरी ।
इयमेव कलौ म्लेच्छजन संकुलके ध्रुवम् ॥ ८१
काशीति ख्यातिं यात्येव नान्यथा मम भाषितम् ।
कलावंतर्हिता काशी यवनप्रवलोद्धुता । ८२
भविष्यति तदा ह्यस्यां काशी संज्ञा सुमुक्तिदा ।
इदं मत्परमं गोप्यं स्थानमस्ति सुनिर्मितम् ॥ ८३
पापिष्ठास्तन्न जानंति मम मायाविमोहिताः ।
धर्मज्ञाश्च सदाचाराः सुशीलाः सत्यवादिनः ॥ ८४

तेषामेव भवेदेषा नयनांतरगोचरा ।
जन्मांतर सहस्त्रेषु यदि तप्तं महत्तपः ॥ ८५

तत्रैव प्राप्यते नूनं मत्पुरी नान्यथा द्विजाः ।
पञ्चक्रोशात्कं क्षेत्रं पूर्वपश्चिमतस्तथा ॥ ८६

दक्षिणोत्तरतश्चैव मृतो मुक्तिमवाप्नुयात् ।
तत्रैव वर्तते लिंगं मदीयं मारकतप्रभम् ॥ ८७

विश्वेश्वर इति ख्यातं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ।
त एव धन्या लोकेषु तैरेव सुकृतं कृतम् ॥ ८८

हे महान् व्रत वाले ऋषियो ! इस क्षेत्र में वह दुर्लभ मुक्ति शरीर के त्यागने से ही प्राप्त होती है इस लिये इस से अधिक पवित्र तीर्थ दूसरा पृथ्वी में कहीं नहीं है ॥ ८० ॥ केदार मण्डल में सारभूत तीर्थों में यही मेरी पुरी सार है यही काशी कलियुग में जब म्लेच्छ जन बहुत हो जावेंगे ॥ ८१ ॥ तब यह क्षेत्र काशी नाम से प्रसिद्ध होगा यह मेरा कहना अन्यथा नहीं है कलियुग में यवनों से नष्ट की हुई काशी अन्तर्धान हो जावेगी ॥ ८२ ॥ तब इस काशी क्षेत्र में ही मुक्तिदायक तीर्थ काशी नाम करके होगा यह मेरा परम गुप्त मनोहर बना हुआ स्थान है ॥ ८३ ॥ पापी पुरुष मेरी माया से मोहित होकर उस क्षेत्र को नहीं जानते हैं जो धर्म के जानने वाले सदाचारी सुशील सत्यवादी हैं ।८४। उन्हीं को यह काशीपुरी दृष्टिगोचर होती है जिन्होंने हजारों जन्मों से तप किया हो ॥ ८५ ॥ हे ब्राह्मणो ! यह मेरी पुरी तब ही प्राप्त होती है यह निश्चित है यह क्षेत्र पूर्व से पश्चिम तक पाँच कोस तक विस्तृत है ॥ ८६ ॥ इसी प्रकार दक्षिण से उत्तर

तक भी पांच कोस हैं जिसकी यहां मृत्यु होती है वह मुक्ति प्राप्त करता है उसी क्षेत्र में ही मरकतमणि की कांति के सदृश मेरा लिंग है ॥ ८७ ॥ जो कि भोग मोक्ष को देने वाला विश्वेश्वर नाम से ख्यात है संसार में वही मनुष्य धन्य हैं उन्होंने ही पुण्य कर्म किया है ॥ ८८ ॥

तैरेव सुतपस्तप्तं यैर्दृष्टं लिंगमुत्तमम् ।
यत्तत्र क्रियते कर्म तदक्षय्याय कल्पते ॥ ८९
महारुद्रविधानेन अभिषेकं करोति यः
ममानुचरतां प्राप्य मयैव सह मोदते ॥ ९०
यं यं प्रार्थयते कामं तं तं प्राप्नोति मानवः ।
येन नालोकितं लिंगं स शोच्यो नात्र संशयः ॥ ९१
पुत्रार्थी पुत्रं प्राप्नोति धनार्थी लभते धनम् ।
इत्युक्त्वा विससर्जाथ सर्वानृषिगणान्मुदा ॥ ९२

❀ स्कन्द उवाच ❀

समाययौ स्वभवने वारणावत संज्ञके ।
ततः प्रभृति देवोसौ तत्रैव वसते ध्रुवम् ॥ ९३
अथान्यच्च प्रवक्षामि यथा तप्तं पुरा तपः ।
जामदग्न्येन रामेण सावधानोऽवधारय ॥ ९४
पुरा परशुरामो वै वारणावतसंज्ञके ।
क्षेत्रे मुनिगणैर्जुष्टे गंगोर्मिभिर्विराजते ॥ ९५

और तप भी उन्होंने किया है जिन्होंने यह उत्तम शिवलिंग देखा है जो कुछ यहां सत्कर्म किया जाता है वह अनन्त हो

जाता है ॥ ८६ ॥ जो मनुष्य महारुद्र के विधान से विश्वेश्वरलिंग का अभिषेक करता है वह मेरा अनुचर होकर मेरे साथ ही विचरता है ॥ ६० ॥ मनुष्य जिस जिस पदार्थ की कामना करता है उसको वह प्राप्त कर लेता है जिसने वह शिवलिंग नहीं देखा वह शोचनीय है इसमें संशय नहीं ॥ ६१ ॥ पुत्र की इच्छा वाला पुत्र प्राप्त करता है धन चाहने वाला धन प्राप्त करता है । स्कन्द जी बोले हे नारद ! शिवजी ने इस प्रकार सब ऋषियों को कह कर उन्हें विसर्जन किया ॥ ६२ ॥ और अपने निवास स्थान वारणावत पर्वत में चले आये उस समय से शङ्कर भगवान जी उसी क्षेत्र में निवास करते हैं ॥ ६३ ॥ इसके अनन्तर और भी आपको कहता हूं जिस प्रकार कि जमदग्नि पुत्र परशुराम जी ने वहां तप किया था नारद ! तुम सावधान होकर समझ लो ॥ ६४ पूर्वकाल में परशुराम जी वारणावत नाम के काशी क्षेत्र में जो कि मुनियों के समूहों से सेवित और गङ्गा जी की लहरों से शोभायमान है ॥ ६५ ॥

नानाद्रुमलताकीर्णे नानामुनिगणान्विते ।
नानारत्नमये दिव्ये नानापक्षिगणावृते ॥ ९६
गंगातटे महादेवं भूतिभूषितमस्तकम् ।
त्रिनेत्रं वृषभारूढं नन्दि भृंग्यादिभिर्गणैः ॥ ९७
सेवितं दण्डहस्तेन द्वारपालेनशोभितम् ।
सुरासुरगणाराध्यं व्याघ्रचर्मासनस्थितम् ॥ ९८
द्वीपिकृत्तिवसानं च चन्द्रार्द्ध शोभिभालकम् ।
ध्यायन् सदाशिवं देवं निश्चलो निर्ममो मुनिः ॥ ९९

जितेन्द्रियो जितक्रोधः स्थितः स्थाणुरिवापरः ।
एवं तपः कुर्वतश्च प्ररुरहुर्लता द्रुमाः ॥ १००
तस्यांगे धूमतः (?) श्चित्रं वभूव मुनिवन्दित ।
एवं प्रतपतस्तस्य संतुष्टोऽभूत् सदाशिवः ॥ १०१

❀ ईश्वर उवाच ❀

उवाच वचनं रम्यं मेघगम्भीरया गिरा ।
वरं वरस्य भद्रं ते यत्ते मनसि वर्तते ॥ १०२

—० स्कन्द उवाच ०—

तत्तुभ्यं सर्वदा दास्ये मा कुरुष्वात्र संशयम् ।
इत्युक्तस्तु शिवेनासौ ययाचे वरमुत्तम् ॥ १०३

जहां कि अनेक वृक्ष लतायें भरी हैं अनेक मुनिजनों से सेवित अनेक रत्नों से युक्त तथा विचित्र और नाना प्रकार के पक्षिगणों से युक्त काशी के गङ्गा तट में ॥ ९६ ॥ भस्म से भूषित मस्तक से शोभायमान तीन नेत्र वाले वृष के ऊपर आरूढ़ हुये नन्दी भृङ्गी आदि गणों से युक्त शिव को ॥ ९७ ॥ हाथ में दण्ड लिये द्वारपाल से शोभित देव-दानवों के आराधना के योग्य व्याघ्र चर्म पर बैठे हुये ॥ ९८ ॥ और हाथी के चर्म को धारण किये अर्धचन्द्र से जिनका मस्तक शोभायमान है ऐसे भगवान शङ्कर का ध्यान करते हुये मोह से रहित परशुराम मुनि जी ॥ ९९ क्रोध तथा इन्द्रियों को जीत कर इस तरह बैठ गये मानो दूसरे ही शङ्कर बैठे हुये हों इस प्रकार उनके तप करते करते उनके शरीर से वृक्ष लतायें उत्पन्न होने लगी ॥ १०० ॥ हे मुनियों से

वन्दित नारद जी ! बुद्धिमान परशुराम जी के शरीर से जब यह आश्चर्य उत्पन्न हुआ तब तपस्या करते हुये उनके ऊपर शिव जी प्रसन्न हुए ॥ १०१ ॥ और मेघ के समान गम्भीर वाणी से मनोहर बोले । शिवजी कहने लगे हे मुने ! तुम्हारा कल्याण हो वर मांगो जो कुछ तुम्हारे मन में है ॥ १०२ ॥ वह सब तुम को सदैव काल के लिये दे दूंगा इस में तुम संशय मत करो । स्कन्द जी बोले-हे नारद ! इस प्रकार जब शिव जी ने परशुराम जी को ऐसा कहा तब उन्होंने उत्तम वर मांगा ॥ १०३ ॥

अजेयत्वं रणेऽरीणां तथा च चिर जीवनम् ।
प्रसन्नेन शिवेनोक्तस्तत्तथैव भविष्यति ॥ १०४
इत्युक्ता परशुं तस्मै दत्त वाञ्छत्रुमारकम् ।
ततः परशुमादाय प्रणम्य च सदाशिवम् ॥ १०५
सर्वभीम त्वयात्रैव वस्तव्यं सर्वदैव हि ।
सकलांशेन देवेश सगणेनेह भक्ति द ॥ १०६
इति देवं प्रार्थयित्वा रामस्तत्रैव संस्थितः ।
चकोर शिव भक्तिं च योगिनामप्य गोचराम् ॥ १०७
ततः स एव संचक्रे क्षत्रियाणां हि सक्षयम् ।
त्रिः सप्तकृत्वो जगति परशोर्धारया मुनिः ॥ १०८

कि युद्ध में शत्रुओं से कभी न जीता जाऊँ और दीर्घायु रहे मुनि ने शिवजी को जब ऐसा कहा तब शिवजी ने कहा कि सब ऐसा ही होगा ॥ १०४ ॥ यह कह करके शत्रुओं के संहार करने वाला कुल्हाड़ा उसको दिया परशुराम जी कुल्हाड़ा लेकर शंकर को प्रणाम करते हुए बोले ॥ १०५ ॥ हे सर्व ! हे भीम !

हे भक्ति के देने वाले शंकर ! आप अपने गणों के और देवताओं के सहित हमेशा यहीं निवास करें। सम्पूर्ण अंश भाव से आपका इसी काशी क्षेत्र में निवास हो ॥ १०६ ॥ परशुराम जी इस प्रकार शिवजी से प्रार्थना करके वहीं रहने लग गये और योगी-जनों से भी दुर्लभ शिवभक्ति को करने लगे ॥ १०७ ॥ फिर कुछ काल के अनन्तर उन्हीं परशुराम जी ने अपनी परशुधारा से इक्कीस वार पृथ्वी में क्षत्रियों का नाश किया ॥ १०८ ॥

इति श्री स्कन्दे महापुराणे केदारखण्डान्तर्गत
सोम्य वाराणसी महात्म्ये प्रथमोऽध्याय ॥ १ ॥

श्री स्कन्दे महापुराणे केदारखण्डार्गत सौम्यवाराणसी
महात्म्ये द्वितीयोध्याय प्रारम्भ्यते ॥

❁ नारद उवाच ❁

कथं त्रिः सप्तकृत्वो हि चक्रे क्षत्रियसंक्षयम् ।
रामः परशुसंयुक्तस्तन्मे वद सुविस्तरम् ॥ १

—❁ स्कन्द उवाच ❁—

एकदा कार्तवीर्यो वै गच्छन् केदारमण्डलम् ।
ययौ तेन च मार्गेण यत्र रामाश्रमं शुभम् ॥ २
जमदग्नेस्तत्र पत्नी जलानयनकारिणः ।
अपक्कमृणमयैः कुम्भेर्ददर्श भगिनीपतिम् ॥ ३
कार्तवीर्यसमस्तैश्च बलैश्च परिवारितम् ।
नाना पत्तिभिरश्वैश्च मत्तमातंगयूथकैः ॥ ४
महारथैः खड्गहस्तैः शोभमानं सुतेजसा ।
दृष्ट्वा तं रेणुकां भूयशू चिंतयामास मानसे ॥ ५
धन्या मद्भगिनी नूनं यस्या एतादृशः पतिः ।
मत्पतेस्तुः जलाहृतुं पात्रं नैवास्ति किंचन ॥ ६
इत्येतच्चिंतयंत्याश्च कलशः सिरसोऽयतत् ।
भूमौ स चूर्णितश्चासीन्तज्ज्ञात्वा जमदग्निकः ॥ ७

क्रोधादुवाच पुत्रांश्च प्रत्येकं पर्य पृच्छत ।
यः कश्चिदस्यारंडायाः शिरच्छेत्ता स मे सुतः ॥ ८

नारद जी बोले हे स्कन्द ! परशुराम जी ने इक्कीस बार क्षत्रियों का संहार कैसे किया था । यह हमको विस्तार पूर्वक कहो ॥ १ ॥ स्कन्द जी बोले-एक समय कृतवीर्य का सहस्त्राजुन नाम का राजा केदार खण्ड की यात्रा करता हुआ उस रास्ते से आ निकला जहां परशुराम जी का आश्रम था ॥ २ ॥ वहां जमदग्नि ऋषि की स्त्री रेणुका मिट्टी के कच्चे घड़ों में जल लाती हुई अपनी भगिनी पति सहस्त्राजुन को देखने लगी ॥ ३ ॥ जो कि वहुत सेनाओं से घिरा हुआ अनेक पैदल सिपाहियों तथा मस्त हाथियों के झुण्डों से युक्त था ॥ ४ ॥ वड़े २ रथ वाले और खड्गधारी वीरों के अत्यन्त तेज से शोभायमान ऐसे राजा को देख कर रेणुका मन में सोचने लगी ॥ ५ ॥ मेरी भगिनी बड़ी धन्य है जिसका ऐसा ऐश्वर्याला पति है मैं कैसी मन्द भागिनी हूँ जिसके पति का जल लाने केलिये एक पात्र भी नहीं है ॥ ६ ॥ ऐसा वह सोच रही थी कि उसके शिर से मिट्टी का घड़ा जमीन में गिर कर चूर हो गया जमदग्नि ऋषि ने यह उसका मन संकल्प जान कर ॥ ७ ॥ क्रोध में आकर लड़कों को कहने लगे जो कोई इस रंडी का शिर छेदन करेगा वह मेरा लड़का है इस प्रकार प्रत्येक लड़के से पूछा ॥ ८ ॥

इत्याज्ञां कृतवान्सार्थें सर्वे नेतीति चाब्रुवन् ।
तान् शशाप स्वपुत्रान्स यूयं प्रेता भविष्यथ ॥ ९

ततः परशुरामं च सस्मार मुनिसत्तमः ।
आविर्भौ तदानीं स आज्ञापयेति च ब्रुवन् ॥ १०

शिर श्छिन्धीति चज्ञप्तं चिच्छेद परशुना तदा ।
मातुः शीर्षं च मेदिन्यां पपात मुनिवन्दितः ॥ ११
जमदग्निस्तु संतुष्टे वरयेति वरं वदन् ।
साधु साधु च प्रोवाच राम त्वं मत्सुतः किल ॥ १२
इति संवादिनं तं तु प्रोवाच वचनं तदा ।
मयि त्वं यदि संतुष्टस्तदा जीवय मातरम् ॥ १३
तथेत्युक्त्वा मुनिस्तां तु जीवयामास भामिनीम् ।
ततः प्रभृति सा देवी रेणुकाख्यां यतो मुने ॥ १४
अद्यापि तत्र विख्यता स्मरणात्पापनाशिनी ।
सप्तजन्मकृतात्पापान्मुच्यते दर्शनान्नरः ॥ १५
यः पूजयति तां देवीं रेणुकाख्यांम मुनीश्वर ।
अयुतार्कविमानी स दिव्यलोके प्रमोदते ॥ १६

जब ऋषि जमदाग्नि ने ऐसी आज्ञा की तो सब लड़कों ने उनका कहना नहीं माना उसको ऋषि ने शाप दे दिया कि तुम सब प्रेत हो जावोगे ॥ ९ ॥ इसके पीछे ऋषियों में श्रेष्ठ जमदग्नि ने परशुराम को याद किया वह उसी समय प्रकट होकर कहने लगे कि हे भगवन् क्या आज्ञा है ॥ १० ॥ हे मुनियों में पूज्य नारद ! परशुराम को देख कर ऋषि ने कहा कि अपनी माता का सिर छेदन कर दो ऐसी आज्ञा पाते ही उन्होंने परशु से माता का सिर काट डाला और वह गिर पड़ी ॥ ११ ॥ जमदग्नि ऋषि इस कर्म से परशुराम को सन्तुष्ट होकर कहने लगे कि बहुत अच्छा किया तुम मेरे प्रिय पुत्र हो इस लिये अब तुम वर

मांगो ॥ १२ ॥ इस प्रकार कहते हुए ऋषि को परशुराम जी बोले कि यदि आप मुझ पर प्रसन्न हो तो माता को जीवित कर दो ॥ १३ ॥ ऋषि ने तथास्तु कह कर उस स्त्री को उस समय जीवित कर दिया । हे नारद ! उस समय से वह ऋषि पत्नी रेणुकादेवी नाम से प्रसिद्ध हुई ॥ १४ ॥ जो कि आज भी विद्यमान है जिसके स्मरण से पाप नाश होता है और दर्शन से सात जन्म के किये हुए पापों से मनुष्य छूट जाता है ॥ १५ ॥ जो मनुष्य उस रेणुकादेवी का पूजन करता है हे मुनीश्वर ! वह दस हजार सूर्य के समान कान्ति वाले विमान से दिव्य स्वर्ग लोक में आनन्द करता है ॥ १६ ॥

अथान्यच्च प्रवक्ष्यामि क्षत्रियांतस्य कारणम् ।
एकदा सुसमासीनां कृपाविष्टो मुनिः स्वयम् ॥ १७

स्वपत्नीं रेणुकाख्यां हि प्रोवाच वचनं मुदा ।
प्रिये ! निमन्त्रयस्व तं भोजनार्थं पतिव्रते ! ॥ १८

स्वस्वसृसहितं कार्त्तवीर्यार्जुनं महीपतिम् ।
समस्तसैन्य लोकै श्वः गजवाजिपदातिभिः ॥ १९

इत्युक्ता सा पतिव्रता रेणुकाख्या मुनीश्वर ।
साध्वी निमंत्रयामास भगिनीं भर्तृसंयुताम् ॥ २०

निमन्त्र्य सवलं भूपं जमदग्निस्तादा मुने ।
आनयामास स्वर्गात्तु कामधेनुं वहुप्रदाम् ॥ २१

चकाराशनसंभारान् खाद्यान् तेयान्सुसंस्कृतान ।
लेह्यान् चोष्यान् तथा चर्व्यान् सर्वान्स्वादुरांस्तथा ॥ २२

गृहाणि सौधतुल्यानि रम्याणि विविधानि च ।
अत्युच्चानि च विस्तीर्णशय्यानि मुनिपुङ्गव ॥ २३

इसके अनन्तर हे नारद अब मैं तुमको क्षत्रियों के नाश का कारण कहता हूं, एक समय दयालु ऋषि सुख से बैठी हुई ॥१७॥ अपनी स्त्री रेणुका को प्रसन्नता पूर्वक कहने लगे कि हे प्रिये ! पतिव्रते तुम उस राजा को निमन्त्रण दो ॥ १८ ॥ जो कि वह तुम्हारी वहिन के साथ सम्पूर्ण सेना, हाथी, घोड़े, पैदल सब को लेकर हमारे यहां भोजन करे ॥ १९ ॥ हे मुनीश्वर ! ऋषि ने उस स्त्री को जब ऐसा कहा तब पतिव्रता रेणुका ने सहस्रार्जुन के सहित अपनी वहिन को निमन्त्रण दिया ॥ २० ॥ जमदग्नि ऋषि ने चतुरंगिणी सेना सहित राजा को निमन्त्रण देकर स्वर्ग लोक से सम्पूर्ण पदार्थ को देने वाली कामधेनु को अपने आश्रम में मंगाया ॥ २१ ॥ उस कामधेनु के द्वारा भोजन सामग्री सब प्रकार के खाद्य पदार्थ पेय, लेह्य, चोष्य और चावने योग्य पदार्थ तैयार किये हुये अत्यन्त स्वादु सब वस्तुओं को उस ऋषि ने तैयार कराया ॥ २२ ॥ हे मुनि श्रेष्ठ ! इस के अतिरिक्त ऊँचे २ महलों के समान मनोहर और बहुत ऊँचे जिन में कि रमणीक विचित्र शय्यायें लगी हुई हैं ऐसे अनेक भवन बनवाये ।

अन्यानपि पदार्थांश्च साधयित्वा मुनीश्वरः ।
आनयामानस राजानं भोजनाय सहार्जुनम् ॥ २४

सवलं च सपत्नीकं सहवाजिपदातिनम् ।
यस्य यस्य यथेच्छासीद्रचयित्वा मुनीश्वरः ॥ २५
आनाय्य सर्वभोज्यं च स तु तमदद्त्तथा ।
भुक्त्वा संतुष्टमनसः सर्व एवाभवंस्तथा ॥ २६

स विस्मितो नृपो भुक्त्वा तापसस्येदृशं तपः ।
येन मे सबलस्यापि भोजनं दत्तवान्मुनिः ॥ २७

अथवा कामधुकुकेयं वर्तते तापसालये ।
तस्या एव प्रभावांश्च याचे तामेव तन्मुनेः ॥ २८

इति सं चिंत्य राजा तु मुनिं प्रोवाच सुव्रता ।
जमदग्ने इयं धेनुर्दीयतां मम सर्वथा ॥ २९

❀ राजोवाचा ❀

भोजनांते दक्षिणायै सबलस्य महामुने ।
इत्युक्तः प्राह राजनं मुनिर्मधुरया गिरा ॥ ३०

❀ जमदग्नी उवाच ❀

प्रभो नाथ ! मदीयेयं धेनुर्नास्ति महीपते ।
इयं वै ब्राह्मणो धेनुः कथं दास्यामि ते नृप ॥ ३१

और भी बहुत से पदार्थों का प्रबन्ध करके मुनियों में श्रेष्ठ जमदग्नि ने राजा सहस्रार्जुन को भोजन के लिये बुलाया ॥ २४॥ पत्नी के सहित तथा हाथी, घोड़े, पैदल सब प्रकार की सेना के साथ राजा को बुलाकर जिसे जैसी इच्छा थी सब को बैठा कर महर्षि जमदग्नि ने ॥ २५ ॥ सब प्रकार के भक्ष्य भोज्य पदार्थों को मंगाकर राजा को भोजन कराया तब राजा और उसकी सेना सब के सब प्रसन्न चित्त हो गये ॥ २६ ॥ राजा भोजन करके विस्मित हो गया कि इस तपस्वी ऋषि का कैसा बड़ा तप है जिसने हमारी सारी सेना के सहित शीघ्र और अनायास से

ही भोजन करा दिया ॥ २७ ॥ यह तो यह जो कामधेनु इस तपस्वी के आश्रम में है इसी का प्रभाव मालूम पड़ता है इस लिये इसी गाय को ऋषि से मांगना चाहिये ॥ २८ ॥ हे सुव्रत ! ऐसा विचार कर वह राजा सहस्त्रार्जुन जमदग्नि से कहने लगा । राजा ने कहा कि हे जमदग्ने ! आप इस कामधेनु को मुझे दे दीजिये ॥ २९ ॥ हे मुने ! भोजन के अन्त में सम्पूर्ण सेना सहित मेरी दक्षिणा में यह गाय दे दो यह सुन कर ऋषि मधुर वाणी से राजा को कहने लगे ॥ ३० ॥ जमदग्नि ने कहा राजन् ! यह गाय मेरी नहीं । हे पृथ्वी के पति ! यह ब्रह्मा जी की गाय है इसलिये मैं आपको इसे कैसे देदूं ॥ ३१ ॥

❀ राजोवाच ❀

अवश्यमेवदातव्या धेनुर्मे मुनिपुङ्गव ।
नोचेत्त्वां हन्मि खड्गेन मा कुरुष्वात्र संशयम् ॥ ३२

जमदग्नि उवाच

गृह्यतां कामधेनुर्वै यदि ते वाहुजं वलम् ।
त्वामियं कामधेनुश्च भस्मसात्प्रकरिष्यति ॥ ३३

❀ स्कन्द उवाच ❀

इत्युक्तो मुनिना राजा क्रोधसंरक्तलोचनः ।
खड्गं निःसार्य कोशात्तु शिरश्चिच्छेद सो मुनेः ॥ ३४
अथ धेनुसमीपे तु गत्वा तां समुपाहरत् ।
सापि क्रोधेन तप्तांगी स्वांगेभ्यो यवनानथ ॥ ३५

वहून्वहुविधानक्रूरान्निःससार तदा मुने ।
यवनैः क्रूरकेष्टैश्च खड्गवर्मलसत्करैः ॥ ३६
हते सैन्ये कामधेनुर्ययौ स्वर्भवनं प्रति ॥ ३७
लज्जाविष्ठमना राजा ययौ केदार मण्डले ।
ब्रह्महत्यापनोदाय यत्र भागीरथी स्मृता ॥ ३८
तत्र स्थित्वा तपस्तप्त्वा मुमुचे ब्रह्महत्यया ।
अथ कालेन महता समायातो महामुने ॥ ३९

राजा बोला हे मुनि श्रेष्ठ ! यह धेनु मुझ को अवश्य देनी पड़ेगी नहीं तो मैं तेरे को अभी खड्ग से काट डालूँगा इस में संशय मत करना ॥ ३२ ॥ जमदग्नि ऋषि बोले यदि तेरी भुजा में कुछ वल है तो इस कामधेनु को ले ले यह गाय तेरे को सेना सहित भस्म कर डालेगी ॥ ३३ ॥ स्कन्द जी वोले हे नारद जब मुनि ने ऐसा कहा तो राजा ने क्रोध से लाल आंखें कर के म्यान से तलवार निकाल कर जमदग्नि ऋषि का सिर काट डाला ॥ ३४ ॥ इस के बाद वह गाय के पास जाकर उस को हरने लगा वह क्रोध से तप्त हुई कामधेनु अपने अङ्गों से यवनों को ॥ ३५ ॥ जो कि असंख्य और अनेक प्रकार से क्रूर थे उनको उत्पन्न करने लगी क्रूर चेष्टा वाले हाथ में ढाल तलवार लिये हुये यवनों ने ॥ ३६ ॥ उस राजा की सम्पूर्ण सेना नष्ट कर दी । सेना के नष्ट हो जाने पर कामधेनु अपने ब्रह्मलोक को चली गई ॥ ३७ ॥ वह राजा भी लज्जित होकर ब्रह्म हत्या को दूर करने के लिये केदार मण्डल में गया जहां भागीरथी का निर्मल प्रभाव है ॥ ३८ ॥ वहां कुछ काल रह कर तप करके ब्रह्म हत्या से मुक्त हो गया इसके अनन्तर कुछ काल के पीछे हे नारद जी परशुराम जी फिर वहां आये ॥ ३९ ॥

परशुरामस्ततः क्षेत्रे रेणुकां तामुवाच ह ।
पुत्र ! पश्येदृशं दुःखं कार्तवीर्यं दुरात्मना ॥ ४०

त्वत्पितुश्च शिरश्छिन्नं तद्विचारय साम्प्रतम् ।
एतन्मे हृद्गतं दुःखं विनश्येत कथंचन ॥ ४१

श्रुत्वा तद्वचनं मातुः क्रोधसंरक्त लोचनः ।
दंतैरोष्ठौ पीडयंश्च प्रोवाच वचनं रुषा ॥ ४२

प्राणोत्क्रमणकाले तु मत्पित्रा किमुदाहृतम् ।
तत् त्वं कथय मे मातर्यदि ते मय्यनुग्रहः ॥ ४३

श्रुत्वा तद्वचनं माता सुतं प्रोवाच रेणुका ।
त्रिःसप्तकृत्वत्पित्रा कराभ्यां भूर्विताडिता ॥ ४४

ताडयित्वा दिवं यात श्चान्यत्किंचिन्न तत्कृतम् ।
इतिमातुर्वचः श्रुत्वा मन्युना कलुषेक्षणः ॥ ४५

प्रतिज्ञां कृतवान् राम एकविंशतिवारकम् ।
करिष्यामि क्षत्रीशून्यां सर्वथैव वसुन्धराम् ॥ ४६

प्रतिज्ञाय ययौ रामो यत्रास्ते कार्तवीर्यकः ।
तेनसाकं महद्युद्ध चक्रे देवासुरं यथा ॥ ४७

यतस्तस्य सहस्त्रं हि वाहूनां परशुधारया ।
चिच्छेद तच्छिरश्चैव ततश्चान्यान्महीक्षितः ॥ ४८

रेणुका कहने लगी हे पुत्र ! इस महान दुःख को देखो । दुष्टात्मा सहस्राजुर्न ने ॥ ४० ॥ तेरे पिता जमदग्नि का सिर

काट दिया अब तुम इस पर विचार करो जिससे हृदय का दु.ख किसी तरह दूर हो जाय॥ ४१ ॥ माता का ऐसा वचन सुन कर क्रोध से जिनके लाल नेत्र हो गये ऐसे परशुराम जी ओठों को दांतों से दवाते हुये क्रोध से कहने लगे॥ ४२ हे माता! मेरे पिता ने प्राणों के निकलते समय क्या कहा यदि तेरा मेरे ऊपर अनुग्रह है तो सत्य वतला॥ ४३॥ रेणुका यह सुन कर बोली हे पुत्र! तेरे पिता ने इक्कीस वार हाथों से पृथ्वी का ताड़न किया था॥ ४४॥ पृथ्वी में हाथ पटक कर स्वर्ग में चले गये इस के अतिरिक्त और कुछ नहीं किया माता का यह वचन सुन कर क्रोध से नेत्रों को भरे हुए॥ ४५॥ परशुराम जी प्रतिज्ञा करने लगे कि मैं पृथ्वी को सब प्रकार से इक्कीस वार क्षत्रियों से रहित कर दूंगा॥ ४६॥ यह प्रतिज्ञा करके परशुराम जी जहां राजा कीर्तवीर्य था वहां चले गये और उस के साथ युद्ध करने लगे जैसे कि देवासुर संग्राम हुआ था॥ ४७॥ इसके अनन्तर उस राजा की हजार भुजाओं को अपनी परशुधारा से सिर के सहित काट डाला इसके पीछे और राजाओं का संहार करने लगे॥ ४८

जधान क्षत्रियान् रामो मृधे त्रिःसप्तसंख्यया।
ततो रामावतारे हि रामेण कृतबुद्धिना॥ ४९
संगतोऽसा महाराज रुद्रेस्मिन् श्रीहरौ वलम्।
चिक्षेप सहसा तत्र धनुर्मार्गेण नारद॥ ५०
तपसे प्रययौ विप्रः सौम्यवाराणसीस्थले।
इति ते कथितो विप्र सौम्यवाराणसीभवः॥ ५१
यं श्रुत्वा सर्वपापेभ्यो मुच्यते भवभीतितः॥ ५२

परशुराम ने युद्ध में इक्कीस बार क्षत्रियों का नाश किया इसके पीछे रामावतार में भगवान् रामचन्द्र जी से वाक् युद्ध किया ॥ ४६ ॥ हे नारद जब परशुराम जी रामचन्द्र जी से मिले तब उन्होंने सहसा धनुष के द्वारा रामचन्द्र जी में सम्पूर्ण बल अर्पण कर दिया ॥ ५० ॥ उस समय से परशुराम जी उत्तरकाशी क्षेत्र में तप करने के लिये चले गये। हे नारद ! सौम्य वाराणसी का यह वृतान्त हमने तुम से कहा ॥ ५१ ॥ जिस को श्रवण कर मनुष्य पापों से और संसार के भय से छूट जाता है ॥ ५२ ॥

इति श्री स्कन्दे महापुराणे केदारखण्डान्तर्गत सौम्यवाराणसी महात्म्ये भाषा टीकायां द्वितीयोऽध्यायः ।

श्री स्कन्दे महापुराणे केदारखण्डान्तर्गतसोम्यवाराणसी महात्म्ये तृतीयोध्याय प्रारम्भ्यते ।

❀ नारद उवाच ❀

कानि कानि च तीर्थानि तत्र सन्ति महामते ।
तेषां विस्तरतो ब्रूहि माहात्म्यं वदतां वर ॥ १ ॥
तथा विशेषलिंगस्य पूजाया वैभवं वद ।
वारणावतमाहात्म्यं सोद्भवं वक्तुमर्हसि ॥ २ ॥

❀ स्कन्द उवाच ❀

शृणु यत्नेन सारं च कुण्डं वै ब्रह्मसंज्ञकम् ।
यत्र भागीरथी रम्या गंगाचोत्तरवाहिनी ॥ ३ ॥

नारद जी बोले कि हे महामते ! बोलने वालों में श्रेष्ठ स्कन्द जी ! उत्तरकाशी में कौन कौन से तीर्थ हैं उनका महात्म्य आप हमको विस्तार पूर्वक कहो ॥१॥ और विशेषतः लिंग पूजा का महत्व तथा उत्पति के सहित वारणावत पर्वत का महात्म्य भी आप कथन करने योग्य हो ॥ २ ॥ स्कन्द जी कहने लगे कि हे नारद तुम सावधान होकर श्रवण करो उत्तरकाशी में सारभूत एक ब्रह्मकुण्ड है जहां पर रमणीय गंगा भागीरथी प्रवेश करती हुई उत्तरकाशी को बहती है ॥ ३ ॥

तत्र स्नात्वा नरो याति ब्रह्मलोकं सनातनम ।
सप्त जन्मार्जितैः पापैर्मुच्यते नात्र संशयः ॥ ४ ॥

स्नातका यं यमिच्छन्ति तं तं कामं लभन्ति ते ।
स्त्रियः पुरुषतां यान्ति पुमांसो यान्ति देवताम् ॥ ५

तज्जलस्पर्शमात्रेण ब्रह्मकुण्डे चराचराः ।
निर्मुक्ताः सर्वपापेभ्यो विमुखा गर्भवेश्मसु ॥ ६

लतागुल्माश्च वृक्षाश्च तृणानि च मृगास्तथा ।
पशवः पक्षिणो वापि जलस्थलगताः पुनः ॥ ७

तत्तद्देहैर्विमुच्यन्ते तज्जलस्पर्शनाद्ध्रुवम् ।
ज्ञानात्ततो भविष्यन्ति द्विजोत्तमास्तपस्विनः ॥ ८

ततो मां ये च ते सर्वे शिवभक्तिपरायणाः ।
शिवे लीना भविष्यन्ति योन्युद्भवविवर्जिताः ॥ ९

तदधो रुद्रकुण्डं तु वर्तते भुवि दुर्लभम् ।
स्नानं करोति यो भक्त्या तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ १०

युगकोटिसहस्राणि रुद्रलोके सुखं वसेत् ।
ततोऽवतीर्य भूमौ तु सप्तद्वीपाधिपो भवेत् ॥ ११

उस ब्रह्मकुण्ड में स्नान करके मनुष्य अविनाशी ब्रह्मलोक में जाता है और सात जन्मों का किया हुआ पाप नष्ट होकर वह मुक्त हो जाता है इसमें संशय नहीं ॥४॥ स्नान करने वाले मनुष्य जो जो अभिलाषा करते हैं उसको प्राप्त कर लेते हैं स्त्रियां अपने शरीर को त्याग कर पुरुष शरीर धारण करती हैं और पुरुष देवतारूप हो जाते हैं ॥५॥ ब्रह्मकुण्ड में उसके जल के स्पर्श मात्र से चराचर प्राणी सब पापों से छूट कर गर्भवास से विमुख हो

३
२८०

जाते हैं ॥ ६ ॥ लतायें झाड़-वृक्ष-घास तथा मृग-पशु-पक्षी आदि सब जन्तु जो जल या स्थल में रहने वाले हैं ॥ ७ ॥ वह उस ब्रह्मकुण्ड के जल के स्पर्शमात्र से अपने नीच शरीरों से छूट जाते हैं फिर शुद्ध ज्ञान के प्रभाव से तपस्वी उत्तम ब्राह्मण होते हैं ॥ ८ ॥ इसके अनन्तर वह सब ब्राह्मण जन्मान्तर में शिव-भक्ति में तत्पर हुये जन्म मरण से रहित होकर मुझ शिव में ही लीन हो जाते हैं ॥ ६ ॥ उस ब्रह्मकुण्ड के नीचे ही संसार में दुर्लभ एक रुद्रकुण्ड है जो मनुष्य भक्ति पूर्वक वहां स्नान करता है उसका पुण्य फल तुम श्रवण करो ॥ १० ॥ वह मनुष्य हजार करोड़ युग पर्यन्त रुद्र लोक वास करता है फिर पुण्य के अल्प होने पर पृथ्वी में जन्म लेकर सात द्वीपों का चक्रवर्ती राजा होता है ॥ ११ ॥

स भुक्त्वा सुखबाहुल्यं रुद्रभक्तिपरायणः ।
देहान्ते स भवेद्योगी गर्भवास विवर्जितः ॥ १२

शिवेन सह लीयेत नात्र कार्या विचारणा ।
तत्रैव वर्तते लिंगं दर्शनान्मुक्तिदायकम् ॥ १३

सकृत्पश्यति यो लिंगं रुद्रेश्वर इति श्रुतम् ।
मोहकञ्चुकमुत्सृज्य ज्ञानकंचुक संवृतः ॥ १४

परिवारान्वयैर्युक्तो सुखं याति शिवालये ।
अयुतार्काभयानेन सेवितश्चाप्सरोगणैः ॥ १५

गीतवाद्यरसोपेतैर्धूयमानो हि चामरैः ।
कल्पकोटिशतं दिव्यं शिवलोके वसेत्सुधीः ॥ १६

ततो यास्यति निर्वाणं सर्वधर्म सुदुर्लभम् ।
योनियंत्रंपरित्यज्य ज्योतीरूपे प्रलीयते ॥ १७
श्राद्धं यः कुरूते तत्र तस्य पुण्यफलं शृणु ।
कुलमेकत्तोरं साग्रं तारितं तेनपैतृकम् ॥ १८

वह संसार में रुद्रभक्ति में तत्पर होता हुआ अनेक प्रकार के सुखों को भोग कर शरीर के अन्त में गर्भवास से रहित योगी बन जाता है ॥ १२ ॥ फिर वह शिव में ही लीन हो जाता है इसमें कुछ संशय नहीं करना चाहिये उसी काशीक्षेत्र में दर्शन से मुक्ति देने वाला शिवलिंग है ॥ १३ ॥ रुद्रेश्वर नामक लिंग को जो मनुष्य एक बार देख लेता है वह मोह के चोले को छोड़ कर ज्ञान के चोले से ढका हुआ ॥ १४ ॥ अपने वंश तथा परिवार के सहित दश हज़ार सूर्यों के तेज के समान चमकने वाले विमान से अप्सराओं से सेवित होकर सुख पूर्वक शिवलोक में जाता है ॥ १५ ॥ गायन बाजे आदि शृङ्गार रसों के सहित छत्र चामरों से सेवित हुआ करोड़ों दिव्य कल्प तक वह विद्वान् शिवलोक में निवास करता है ॥ १६ ॥ इसके अनन्तर सब धर्मों से भी दुर्लभ ऐसे निर्वाण पद को जाता है और गर्भवास के बन्धन को त्याग कर ज्योतिरूप में लय हो जाता है ॥ १७ ॥ उस रुद्रकुण्ड में जो मनुष्य श्राद्ध करता है उसका तुम पुण्य फल श्रवण करो वह मनुष्य अपने अगले पिछले एक सौ एक पितृकुल को तार देता है ॥ १८ ॥

तथैव मातृकं वापि सखिबन्धुजनस्य च ।
गुरूणां च तथा राज्ञा श्वशुराणां कुलं तथा ॥ १९
सकृत्पिण्डप्रदानेन प्रणयेद्ब्रह्मशाश्वतम् ।
एतत्तीर्थमवज्ञाय गयां यः परिधावति ॥ २०

तैर्मर्त्यैः स्वकुलं विप्र पातितं नरके ध्रुवम् ।
यदैततीर्थप्राप्तिर्न तदा गयां परिव्रजेत् ॥ २१
तदधोवरणायाश्च गङ्गाया यत्र संगमः ।
तत्र स्नातुः फलं वक्ष्ये शृणु त्वं मुनिसत्तम् ॥ २२
कुरुक्षेत्रे प्रयागे च वाराणस्यां हि सागरे ।
यत्पुण्यं कोटिधा स्नानातथा वदरीकाश्रमे ॥ २३
देवप्रयागे श्रीक्षेत्रे कोटिधा स्नानतो हि यत् ।
तत्पुण्यं कोटिगुणितं प्राप्यते मज्जनात्सकृत् ॥ २४
मोहशोकैर्विनिर्मुक्तो गर्भवासविवर्जितः ।
श्री शिवे परिलीदेत सत्यं सत्यं न संशयः ॥ २५
तत्र पिण्डप्रदाता च त्रिकोटिकुलमुद्धरेत् ।
अज्ञानादपि मत्स्याद्यामज्जितान पुनर्भवाः ॥ २६

इसी प्रकार माता, मित्र, वन्धुवर्ग, गुरु, राजा, श्वसुर इनके कुल को भी ॥ १६ ॥ एक वार पिंड देने से ही निर्भय ब्रह्मलोक में पहुंचा देता है इस तीर्थ की अवज्ञा करके जो गया की तरफ भागते हैं ॥ २० ॥ उन लोगों ने अपने कुल को अवश्य नरक में गिरा दिया है। हे नारद ! जब किसी कारण इस तीर्थ की प्राप्ति न होवे तब गया में जाना चाहिये ॥ २१ ॥ उस रुद्र कुण्ड के नीचे जहां गङ्गा और वरुणा का संगम होता है। हे मुनियों में श्रेष्ठ नारद ! उस संगम में स्नान करने वाले को जो फल होता है वह कहता हूँ तुम सुनो ॥ २२ ॥ कुरु क्षेत्र, प्रयाग, पूर्वकाशी, गंगासागर तथा बद्रीकाश्रम में करोड़ों स्नान करने से जो पुण्य

होता है ॥ २३ ॥ इसी तरह देवप्रयाग, श्रीनगर में करोड़ गुणा होकर मिलता है ॥ २४ ॥ वह पुरुष फिर मोह शोक से रहित होकर गर्भवास से छूट कर श्री शिवजी में लीन हो जाता है इस में कुछ संशय नहीं ॥ २५ ॥ इस संगम पर पिण्डदान करने वाला अपने तीन करोड़ कुल का उद्धार करता है मत्स्यादि जल-जन्तु भी यदि वहां अज्ञान से स्नान करलें तो उनका फिर पुनर्जन्म नहीं होता ॥ २६ ॥

यो दद्यादणुमात्रं हि हिरण्यं भक्ति तत्परः ।
सोऽपि याति परं स्थानं यत्र गत्वा न शोचति ॥ २७

स्नानं जपं च दानं वा वाराणस्यां कृताधिकम् ।
ब्रह्महत्यादिकं पापं यत्किंचित्कुरुते नरः ॥ २८

तत्सर्वं विलयं याति तज्जलस्पर्श मात्रतः ।
तत्रैव वर्तते लिंगं वरुणेशमिति श्रुतम् ॥ २९

तद्दर्शी मनुजो भक्त्या मोक्षं प्राप्नोति तत्क्षणात् ।
सप्तजन्मार्जितैः पापैर्मुच्यते मुनिसत्तम ॥ ३०

ततस्चवसते शैवे पुरे रम्ये गणावृते ।
ततः प्रलीयते तस्मिन् योनिसंकटवर्जितः ॥ ३१

अथासी यत्र गंगायां संगमे तत्र मानवाः ।
कृमि कीट पतंगाद्याः स्नाता यान्ति विमुक्तताम् ॥ ३२

तत्र दत्तं हुतं तप्तम मृतत्वाय कल्पते ।
अत्रान्यच्च प्रवक्ष्यामि इतिहासं पुरातनम् ॥ ३३

अत्याश्चर्यकरं पुंसां पठनात्पापनाशनम् ।
अयोध्यायां नृपः कश्चिद्बभूव विनयान्वितः ॥ ३४
नाम्नासौ चन्द्र वर्म्मेति ख्यातो बहु सुतान्वितः ।
बहुस्त्रीभिः परिवृतो महद्वृतो महदैश्वर्यसंयुतः ॥ ३५

जो मनुष्य परिणाममात्र सुवर्ण को भक्ति पूर्वक दान करता है वह उस परम पद को जाता है जिसमें जाकर कोई शोक चिंता आदि नहीं होते ॥ २७ ॥ उत्तरकाशी तीर्थ में स्नान, दान, जप किया हुआ अधिक हो जाता है ब्रह्महत्यादि जो कुछ पाप मनुष्य करता है ॥ २८ ॥ वह सब वरण संगम के जल के स्पर्श मात्र से नष्ट होता है । उसी संगम पर वरुणेश नाम से प्रसिद्ध शिवलिंग है ॥ २९ ॥ उसका दर्शन करने वाला मनुष्य एक क्षण में ही मुक्त होता है और हे नारद ! सात जन्मों के किये हुये पापों से भी छूट जाता है ॥ ३० ॥ इसके अनन्तर वह शिव गणों से घिरे हुये रमणीय शिवलोक में वास करता है अन्त में योनि संकट से छूट कर शिव में लीन हो जाता है ॥ ३१ ॥ हे नारद ! अब जहां गंगा और असी का संगम है वहां मनुष्य तथा कृमि कीड़े, पतंगे आदि स्नान कर मुक्त हो जाते हैं ॥ ३२ ॥ उस संगम में हवन, दान, तप आदि किया हुआ अक्षय हो जाता है इस तीर्थ के विषय पर मैं तुमको एक प्राचीन इतिहास कहता हूं ॥ ३३ ॥ जो अत्यन्त आश्चर्यजनक और पाठ करने से मनुष्यों के पाप को नाश करने वाला है अयोध्या में कोई विनय से युक्त एक राजा हुआ ॥ ३४ ॥ जिसका नाम चन्द्रवर्मा प्रसिद्ध था। वह बहुत पुत्र स्त्री आदियों से युक्त बड़े ऐश्वर्य वाला था ॥ ३५ ॥

दत्तानि तेन दानानि गोभूवासांसि च द्विज ।
महादानानि विप्रेभ्यो ददो धान्याचलादिकम् ॥ ३६

तथा ब्रह्माण्डदानं सुवर्णं पृथ्वीं तथा ।
व्रतानि च चकारासौ बहुपुण्यानि नारदः ॥ ३७
पुराणानि च शुश्राव तीर्थानां वैभवं तथा ।
अधिकं सर्वं तीर्थेभ्य मत्त्वा केदार मण्डलम् ॥ ३८
विरक्ताऽभूत्तदा सोऽथ वैभवे च सुखप्रदे ।
सर्वं गृहाश्रमं त्यक्त्वा गमनाय मनोऽकरोत् ॥ ३९
केदारेश्वर यात्रायां खड्गचर्मधरः सुधीः ।
सोपान युक्तो ययौ सोऽथ गङ्गाद्वारे महामुने ॥ ४०
आगत्य ब्रह्मकुण्डं च स्नात्वा दक्षेश्वरं विभुम् ।
प्रजापतिं च नत्वाथ कुब्जाम्रकं समाययौ ॥ ४१
तत्रापि बहुशः स्नात्वा प्रणम्य भरतं मुदा ।
लक्ष्मणाश्रममागत्य पूजयित्वा च तं विभुम् ॥ ४२
वशिष्ठाश्रममागत्य दृष्ट्वा तत्र महामुनिम् ।
देवप्रयागे आगत्य स्नात्वा दृष्ट्वा रघूद्वहम् ॥ ४३

हे नारद जी ! उसने अनेक प्रकार के गौ–भूमि–वस्त्रादि बड़े बड़े पर्वत के समान धान्य राशि आदि महादान ब्राह्मणों को दिये ॥ ३६ ॥ हे नारद ! उस राजा ने सुवर्ण पृथ्वी तथा ब्रह्माण्ड का भी दान किया और बहुत से पुण्यदायक व्रत करता था ॥ ३७ और तीर्थों के महात्म्य तथा पुराणों को वह श्रवण करता था फिर उसने सब तीर्थों से केदार मण्डल का अधिक महात्म्य समझा ॥ ३८ ॥ तब वह सुख देने वाले ऐश्वर्य को सब गृहस्थाश्रम को त्याग कर विरक्त हो गया और केदारखण्ड में जाने के लिये

संकल्प करने लगा ॥ ३६ ॥ तदन्तर ढाल तलवार को हाथ में लेकर बुद्धिमान राजा अपने जूते पहन कर केदारखण्ड की यात्रा के लिये हरिद्वार में पहुंचा ॥ ४० ॥ वहां ब्रह्मकुण्ड में स्नान कर कनखल में दक्षप्रजापति का दर्शन नमस्कार कर पीछे कुब्जाम्रक ऋषिकेश में आया ॥ ४१ ॥ वहां कुब्जाम्रक कुण्ड में स्नान कर उसी के समीप रघुनाथ जी का दर्शन करके फिर भरत जी का दर्शन करते हुए लक्ष्मणझूले में आकर उस भगवान लक्ष्मण जी का पूजन किया ॥ ४२ ॥ इस के बाद वशिष्ठाश्रम में वशिष्ठ महामुनि का दर्शन करके देवप्रयाग में स्नान कर रघुनाथ जी का दर्शन किया ॥ ४३ ॥

ययौ तत्र महाक्षेत्रं गङ्गाभिल्लांगनाश्रम् ।
मिलिता तत्र संगेतु सस्नौ पुण्यप्रदे मुने ॥ ४४

ततो गच्छेत्सौम्यकाशीनज्ञानात्स महाशयः ।
यत्रासीगंगयोः संगस्तत्रा मज्जन्मुदान्वितः ॥ ४५

आगत्य तीरे वस्त्राणि परिधाय महामतिः ।
नापश्यच्चर्मकोशं च उभे चौपानहौ तथा ॥ ४६

इतस्ततो भ्रमन्सोऽथ चिन्तयन् तदहेतुकम् ।
गतं कुत्र ममातीव प्रियवस्तु न वेद्मि तत् ॥ ४७

वदतस्तस्य क्षेत्रस्य पुरस्तात्कृतकर्मणः ।
आविर्बभुस्त्रिनेत्राश्च शूलिनो वृषभध्वजाः ॥ ४८

गजकृतिवसानाश्च व्याघ्रचर्मपरिवृताः ।
सशशांकार्द्धभालीकास्तान्दृष्ट्वा व्यस्मयदवृतः ॥ ४९

चिन्तयन् शिवरूपान्वै धन्योऽहं कृतबुद्धिमान ।
पश्येयं शिवरूपांश्च इमानाश्चर्यकारिणः ॥ ५०
शिव एकोऽस्ति सर्वत्र पुराणे परिगीयते ।
अद्यैव वहुधा दृष्टो मया एकः शिवस्तथा ॥ ५१

हे मुने ! वहां से आगे जहां गंगा और भिलंगना का संगम है उस महाक्षेत्र नामक टिहरी में जाकर पुण्य देने वाले संगम पर स्नान किया ॥ ४४ ॥ इसके अनन्तर वह अज्ञान से सौम्य-काशी (उत्तरकाशी) में महान आशय वाला वह राजा जा पहुंचा जहां असी और गंगा का संगम है वहां प्रसन्नता पूर्वक स्नान करने लगा ॥ ४५ ॥ स्नान करके किनारे पर आया और वस्त्रों को पहिन कर देखा तो अपनी तलवार का म्यान और दोनों जूते नहीं हैं ॥ ४६ ॥ वह राजा इधर–उधर घूमता हुआ उसका कारण सोचने लगा कि मेरी प्रिय वस्तु कहां चली गई यह मैं नहीं जान सकता ॥४७॥ राजा कृतकर्मा के इस तरह मन में कहते हुए उस असी संगम क्षेत्र के सामने तीन नेत्र वाले, शूल को धारण किये बैल पर चढ़े हुए शिवगण प्रकट हुए ॥ ४८ ॥ जो कि हाथी के चर्म को धारण किये हुए और व्याघ्र के चर्म को ओढ़े हुए थे जिनके मस्तक में अर्ध चन्द्रमा विराजमान ऐसे उनको देख कर राजा वहुत चकित हुआ ॥ ४९ ॥ उनको शिवरूप समझता हुआ विचारने लगा कि मैं धन्य हूँ, शुद्ध बुद्धि वाला हूँ जो कि आश्चर्य करने वाले इन शिव रूपों को मैं देखता हूं ॥ ५० ॥ परन्तु सब जगह पुराणों में एक ही शिव वर्णन किया गया है । इस समय तो मैंने एक ही शिव वहुत प्रकार का देख लिया है ॥ ५१ ॥

❀ स्कन्द उवाच ❀

अत्याश्चर्यं तु तज्ज्ञात्वा पर्यपृच्छत्तु तांस्तदा ।
विनयावनतो भूत्वा उवाच वचनं त्विदम् ॥ ५२

—० चन्द्रवर्मोवाच ०—

के यूयं शिवरूपा वै शशांककृतशेखराः ।
तन्मे विस्तरतो ब्रूत यदिचेन्मयि वो दया ॥ ५३

०-० शिवरूपिण उचुः ०-०

त्वं न जानासि भो भद्र जीवनमुक्तोसि सांप्रतम् ।
वयं च त्वत्प्रसादेन शिवा जाता न संशयः ॥ ५४
खड्गो मेषो वृषो गौश्चतेषां चर्माणि त्वत्सह ।
समागतानि तीर्थेऽस्मिन् सर्वेषां मुक्तिदायकम् ॥ ५५
एतत्तीर्थस्य संसर्गाज्जाता वै वृषभध्वजाः ।
इति तेषां वचः श्रुत्वा धन्योऽहमिति भावयन् ॥ ५६
दृष्ट्वा तान् शिवरूपांश्च गतान्कैलाशपर्वते ।
सोऽपि त्रैव लीनोऽभूच्छिवदेहे न संशयः ॥ ५७
इति ते कथितं दिव्यं माहात्म्यं संगमस्य हि ।
तज्जलस्यपर्शमात्रेण मुक्तिर्भवति दुर्लभा ॥ ५८
तत्रैव विष्णुकुण्डं च यत्र स्नात्वा हरिर्भवेत् ।
पिण्डदानं कृतं तत्र कुलकोटिं समुद्धरेत् ॥ ५९

अस्मिंस्तीर्थे महाभाग वारणावतसंज्ञके ।
त्रिस्त्रिः कोट्योर्द्ध कोटीश्च तीर्थानामपि सुव्रत् ॥ ६०

स्कन्द जी बोले हे नारद ! यह अत्यन्त आश्चर्य जान कर उनको पूछने लगा, विनय से नम्र होकर यह बचन बोला ॥ ५२॥ चन्द्रवर्मा बोला कि आप लोग चन्द्रमा को मस्तक में धारण किये शिव स्वरूप वाले कौन हो यह हमको आप विस्तार पूर्वक कहो यदि आप की मेरे ऊपर दया है ॥ ५३ ॥ शिवरूपी देवता कहने लगे हे भद्र ! तुम यह नहीं जानते हो तुम अब जीवन्मुक्त हो गये हो हम भी तुम्हारी कृपा से शिव हो गये हैं संशय नहीं ॥ ५४ ॥ गैंडा, भेड़, बैल, गाय इनके चमड़े तुम्हारे साथ मुक्ति देने वाले इस संगम में आये हुये थे ॥ ५५ ॥ सो इस तीर्थ के संसर्ग से सब शिव रूप हो गये हैं इस प्रकार उनका बचन सुन कर वह राजा मैं धन्य हूँ ऐसी भावना करने लगा ॥ ५६ ॥ फिर उन शिव रूपों को कैलाश पर्वत में जाते देखकर वह राजा भी वहीं पर शिव रूप हो गया इसमें संशय नहीं ॥ ५७ ॥ हे नारद ! यह मैंने तुमको सग का दिव्य महात्म्य सुनाया जिसके जल के स्पश मात्र से दुर्लभ मुक्ति होती है ॥ ५८ ॥ इस प्रकार वहीं एक विष्णुकुण्ड है जहां स्नान करने से विष्णु रूप होता है और वहां पिण्डदान किया हुआ तीन करोड़ कुल का उद्धार करता है ॥५६॥ हे महाभाग ! इस वारावत क्षेत्र में साढ़े तीन करोड़ तीर्थ हैं ।६०।

तत्रैवाभूत्पुरा ह्यत्र जातुकं गृहमुत्तमम् ।
कौरवैः पांडवाः सर्वे धृतास्तत्र महामते ॥ ६१
अद्यापि दृश्यते तत्र दग्धं जतुनदन्ति के ।
तत्रैव पर्वते शक्तिर्यस्याः स्पर्शाद्विमुक्तिभाक् ॥ ६२

अधः शेषस्य शिरसि धृता सा परदेवता ।
राजराजेश्वरी देव्याः सा शक्तिः परमा स्मृता ॥ ६३
यैर्दृष्टा सा महाशक्तिस्ते यान्ति परमां गतिम् ।
समारोहति तच्छैलं वरणावतसंज्ञकम् ॥ ६४
अश्वमेधसहस्रस्य फलं स्यातु पदे पदे ।
निःसरन्ति च या नद्यस्तस्माद्या निर्जलानि च ॥ ६५
तत्सर्वजान्हवीतुल्यं कथितं तु महर्षिभिः ।
ततो वै दक्षिणे भागे विलमेकं महत्तरम् ॥ ६६
तस्मिन्महातपानाम ऋषिरास्ते स्मरन् हरिम् ।
अन्येऽपिचैव मुनयो वर्तते वहवो मुने ॥ ६७
सन्यस्तसर्वकर्माणो मुक्तिमार्गे व्यवस्थिताः ।
निर्द्वन्दनिरहंकाराः काशीविश्वेश्वरावनु ॥ ६८

हे विशाल बुद्धिवाले नारद ! उस क्षेत्र में पहले जतु गृह लाक्षा भवन वना हुआ था जहां कौरवों-पांडवों को बन्द कर जला दिया था इस समय भी उस भवन में लाख दिखाई देता है उस लाक्षा गृह के समीप शक्ति है जिसके स्पर्श से मुक्ति होती है ॥ ६१ ॥ वह शक्ति राजेश्वरी राजाओं की कुलदेवी की है जो कि नीचे शेष भगवान के सिर पर रखी है ॥६२॥ जिन महापुरुषों ने उस शक्ति का दर्शन किया है वह परम गति को प्राप्त होते हैं जो वारणावत नामक पर्वत के ऊपर चढ़ता है ॥ ६३ ॥ उसके एक एक पद रखने में हजारों अश्वमेघ यज्ञ का फल होता है और

जितने नदी नाले उस पर्वत से निकलते हैं ॥ ६४ ॥ वह सब जान्हवीं के समान हैं यह ऋषियों ने कहा है उस उत्तरकाशी के दक्षिण की तरफ पर्वत में एक बहुत वड़ी गुफा है ॥ ६५ ॥ विल में एक महातप नाम का ऋषि विष्णु का चिन्तन करता रहता था और भी वहुत से ऋषि वहां रहने वाले हैं ॥ ६७ ॥ जिन्होंने सव कर्मों को त्याग कर मुक्तिमार्ग का आश्रय लिया है और निर्द्वन्द अहंकार से रहित हुये काशी विश्वनाथ का ॥ ६८ ॥

स्मरन्तः परयाभक्त्या अन्ये चापि तृणद्रुमाः !
सरीसृपाः पक्षिणश्च तथान्ये जीवजन्तवः ॥ ६९
निवसन्ति स्थले रम्ये छन्नरूपा महर्षयः ।
कलौनास्त्येव नास्त्येव पापिनां गतिरन्यथा ॥ ७०
अस्मात्क्षेत्रवराधीशान् मुक्तिमार्गप्रदर्शकात् ।
तमात्सर्वप्रयत्नेन इदं स्थानं न सत्यजेत् ॥ ७१
इयमुत्तरकाशी हि विना भैरवयातनाम् ।
ददाति परमांसिद्धिमन्यक्षेत्रेषु दुर्लभाम् ॥ ७२
इदमेव परं स्थानं चतुर्वर्गप्रसाधकम् ।
यः सप्तपंचरात्रं वै निराहारो जितेन्द्रियः ॥ ७३
विश्वेश्वरं महालिंगं रुद्राध्यायमनुस्मरन् ।
अभिषेकं प्रकुर्वाणो दुर्लभं चापि साधयेत् ॥ ७४
सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्वयज्ञेषु यत्फलम् ।
तत्पुण्यकोटिगुणिं तमभिषेकाल्लभेन्नरः ॥ ७५

वृहद्रथंतराभ्यां यः शतकृत्वः शिवं भजेत्।
स्नापयेच्च तथा ताभ्यां स स्वयं वृषभध्वजः॥ ७६

परम भक्ति से चिन्तन करते हैं और भी तृण लता वृक्षादि पक्षी, सर्प अनेक प्रकार के जो जीव जन्तु हैं॥६९॥ वह सब ऋषि गुप्त रूप से उस रमणीय स्थान में निवास करते हैं। इस काशी क्षेत्र के अतिरिक्त कलियुग में पापियों की गति किसी प्रकार की नहीं है॥७०॥ मुक्ति मार्ग को दिखाने वाले सबसे श्रेष्ठ इस क्षेत्र से अन्य कोई नहीं है इस लिए सब प्रयत्न से इस स्थान को नहीं छोड़ना चाहिए॥७१॥ यह उत्तरकाशी बिना भैरव यातना अर्थात भैरव उपासना के बिना ही उत्तम सिद्धि देती है जो अन्य तीर्थों में मिलनी दुर्लभ है॥ ७२॥ चतुवर्ग जो अर्थ काम मोक्ष है इस का साधन यही एक स्थान है जो पांच सात रात्रि निराहार और जितेन्द्रिय होकर॥७३॥ महालिंग विश्वेश्वर के रुद्राध्याय का चिन्तन करता हुआ अभिषेक करता कराता वह दुर्लभ को भी सिद्ध कर लेता है॥७४॥ सब तीर्थों में जो पुण्य है और सब यज्ञों में जो फल है वह फल यहां रुद्राभिषेक से करोड़ गुना हो जाता है॥ ७५॥ जो मनुष्य बृहद्रथंतर नमक और चमक से शिव का भजन पाठ तथा अभिषेक भी करता है वह स्वयं ही महादेव है॥७६॥

यं यं चिन्त्यतते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्।
राज्यभ्रष्टोऽपि यो राजा सौऽत्र शक्तिं समर्चयेत्॥ ७७

उपचारैः षोडशभिः पंचभिर्वा यथा विधि।
एवं मासं तु यो राजा कुरुते कारयेदपि॥ ७८

प्राप्नोति राज्यं विपुलं हतशत्रुरकंटकम् ।
अपुत्रो दशधा तत्र स्नापनं दुग्धवारिणा ॥ ७९
करोति शक्त्या विप्रेश स पुत्रं लभते ध्रुवम् ।
विद्यार्थी यस्तत्र गच्छेत्तस्मिन्वै शक्तिमण्डले ॥ ८०
जपेत्सारस्वतं मंत्रं निराहारो जितेन्द्रियः ।
लभते दशरात्रेण प्रसादं पुरुषस्तया ॥ ८१
निर्द्रव्यो यो द्विजश्रेष्ठ कुटुम्बाभिद्रुतः परम् ।
तस्मिन्नेव स्थले रम्ये गच्छेदीशमनुस्मरन् ॥ ८२
सप्तरात्रं निराहारो जपेत्पञ्चाक्षरं मनुम् ।
प्राप्नोति परमां लक्ष्मीं मोदते राजवत्सदा ॥ ८३
मृतोऽसौ यत्र कुत्रापि मुक्तो भवति सर्वथा ।
पंचक्रोशात्मकस्यास्य यः करोति प्रदक्षिणाम् ॥ ८४

जो जो वह कामना करता है उसको निश्चय से प्राप्त करता है जो राजा राज्य से अलग हो गया हो वह यहां पर आकर शक्ति का पूजन करे ॥ ७७ ॥ षोडशोपचार अथवा पंचोपचार से ही विधि पूर्वक एक महीने तक जो राजा पूजन करे अथवा करावे ॥७८॥ वह शत्रु से रहित निष्कंटक बहुत बड़े राज्य को पाता है जिसका पुत्र न हो वह दस बार दूध जल से ॥७९॥ शक्ति जी का स्नान करता है वह सुपुत्र पाता है विद्या की इच्छा वाला उस शक्ति मन्दिर में जाकर ॥८०॥ जितेन्द्रिय निराहार रह कर जो सरस्वती का मन्त्र स्तोत्र जपता है उसको दश रात्रि बीतने पर देवी का वरदान होता है ॥८१॥ हे नारद ! निर्धन मनुष्य कुटुम्ब

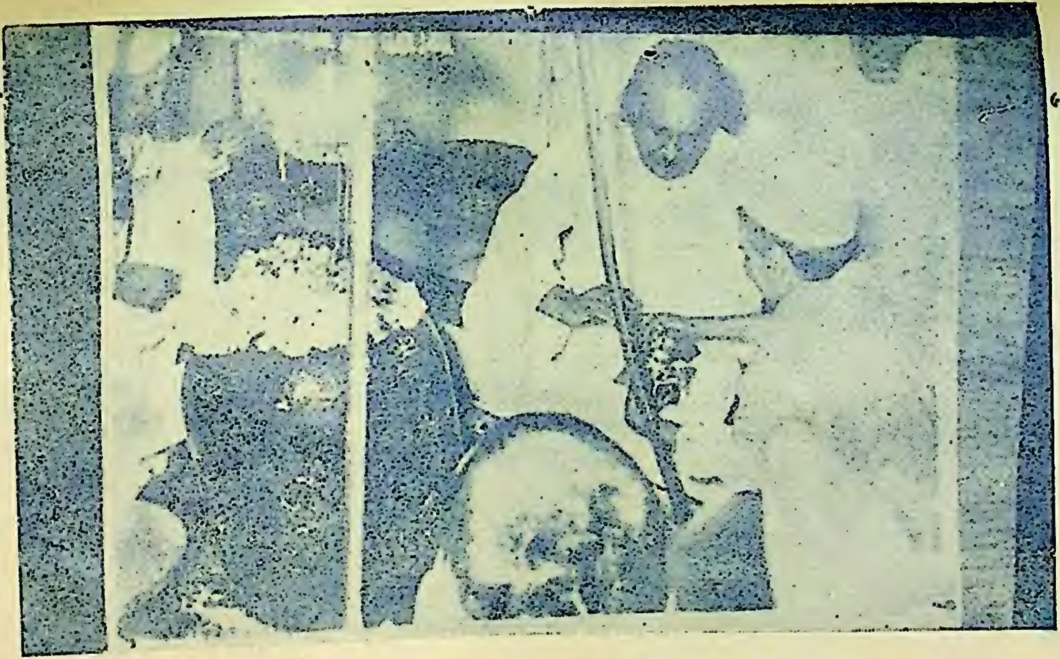

डाक्टर सम्पूर्णानन्द जी मुख्यमन्त्री, उत्तरप्रदेश
तीर्थ पुरोहित वैद्य सूरतराम जी द्वारा उत्तरकाशी में
भगवान विश्वनाथ का पूजन कराते हुये ।

से अधिक सताया हुआ उसी मनोहर स्थल में जाकर शिव का ध्यान करता हुआ ॥८२॥ सात रात्रि तक निराहार रह कर पंञ्चाक्षर मन्त्र का यदि जप करे तो वह अनन्त लक्ष्मी को पाता है और राजा के समान सुख भोगता है ॥८३॥ इस उत्तरकाशी क्षेत्र के अन्दर जो जहां कहीं भी मर जाता है वह अवश्य मुक्त होता है और जो पांच कोश विस्तृत इस काशी क्षेत्र की परिक्रमा करता है ॥ ८४ ॥

सप्तद्वीपवती तेन परिक्रान्ता वसुन्धरा ।
गोचर्ममात्रामपि दद्यादत्र वसुन्धराम् ॥ ८५

सप्तद्वीपवतीनाथः स भवेत्पुरुषोत्तमः ।
त्रुटिमात्रं च यः स्वर्णं प्रदद्याद्वेदविद्विजे ॥ ८६

तेन दत्तं भवेत्सर्वं जगच्चसचराचरम् ।
अभयं सर्वभूतेभ्यो यो दद्यात्तत्र नारदः ॥ ८७

स स्वयं नीलकण्ठःस्यादुमया सह मोदते ।
पंचक्रोशात्मके क्षेत्रे नैव पापं समाचरेत् ॥ ८८

यदन्यत्र कृतं कर्म तदत्र परिनश्यति ।
अत्र यत्क्रियते कर्म वज्रलेपाय कल्पते ॥ ८९

अन्यत्र कृतपापानि क्षेत्राद्वाह्ये पतंति हि ।
अस्मिन्यत्कृयते कर्म तदस्थिषु परिष्कृतम् ॥ ९०

अस्मात्स्थानात्परं स्थानं न दृष्टं क्वापि नारद ।
यत्र भागीरथी साक्षा द्यत्र विष्णुः सनातनः ॥ ९१

उसने सात द्वीप वाली पृथ्वी की परीक्रमा करली। जो यहां आकर गौ चर्म के बराबर पृथ्वी का दान करता है॥ ८५॥ वह सात द्वीप वाली पृथ्वी का सर्वोत्तम राजा होता है और जो मनुष्य त्रुटि मात्र भी वेदपाटी ब्राह्मण को सुवर्ण दान करता है ॥८६॥ उसने सम्पूर्ण चराचर संसार का दान कर दिया है जो यहां सब प्राणियों को भय से बचा कर अभयदान करता है, हे नारद ॥८७॥ वह स्वयं नीलकण्ठ होकर पारवती के साथ विहार करता है पांच कोष के इस काशीक्षेत्र में कदापि पाप न करे ॥८८ जो अन्य तीर्थों में किया हुआ पाप है वह इस क्षेत्र में नष्ट हो जाता है और यहां पाप किया जाय तो वह बज्रलेप अमेट हो जाता है॥ ८९॥ दूसरे तीर्थों में किये हुये पाप काशी के बाहर ही रह जाते हैं जो यहां किया हुआ पाप है वह उसकी हड्डियों में समा जाता है अर्थात सूक्ष्म शरीर से जा मिलता है॥ ९०॥ हे नारद! इस स्थान के सिवाय दूसरा तीर्थ स्थान हमने कहीं नहीं देखा जहां साक्षात गंगा भागीरथी और अनादि विष्णु हैं॥ ९१॥

यत्र देवो भवानीशः प्रमथैस्सह तिष्ठति।
तस्याः पूर्वोत्तरे पार्श्वे वायुतीर्थमिति श्रुतम्॥ ९२

यत्र वायुः पुरा कृत्वा तपः परमदारुणम्।
दिक्पालत्वं यतः प्राप्तं तदेतद्वायुत्तीर्थमम॥ ९३

वायव्येति समाख्याता नदी परम पावनी।
यस्यां स्नात्वा नरो याति वायुलोकं न संशयः॥ ९४
ततोवै दक्षिणे भागे योजनार्द्धे मुनीश्वर।
यमतीर्थमिति ख्यातं यमादर्शनकारकम्॥ ९५

यावद्धि तिलबीजेन भूमिराच्छाद्यते मुने।
तत्र तीर्थत्रयं वोध्यं ततस्तीर्थमयी पुरी ॥ ९६
संसार भयभीतानां शरणं सोम्यकाशिका।
यावंत्यत्र महाभाग ह्यश्मकूटानि संति वै ॥ ९७
तानि वै शिवलिंगानि नात्र कार्या विचारणा।
इदं ते कथितं सर्वं मुक्तिक्षेत्रं तथोत्तरे ॥ ९८

जहां पारवती देवी का स्वामी शिवजी अपने गणों के साथ रहते हैं उससे पूर्व उत्तर के बीच में वायु तीर्थ प्रसिद्ध है ॥६२॥ जहां पूर्वकाल वायु ने बड़ा घोर तप करके दिक्कपाल का पद पाया था इसलिये वह वायुतीर्थ है ॥६३॥ उस तीर्थ में वायव्य नाम की परम पवित्र एक नदी जिस में स्नान करके मनुष्य वायुलोक में चला जाता है इस में संशय नहीं ॥ ६४ ॥ उस में दक्षिण की तरह आधे योजन की दूरी पर यम तीर्थ है हे मुनीश्वर उस तीर्थ की यात्रा से फिर यमराज का दर्शन नहीं होता ॥६५॥ हे नारद ! एक तिल के बीज से जितनी भूमि ढक जाती है उतनी भूमि में तीन तीर्थ होते हैं इसलिये उत्तरकाशी तीर्थमयी पुरी है ॥ ६७ ॥ संसार के भय से डरे हुए मनुष्यों के लिए एक उत्तरकाशी ही शरण है। हे महाभाग ! जितने इस क्षेत्र में पत्थरों के ढेर हैं ॥ ६७ ॥ वह सब शिवलिंग हैं इसमें तर्क नहीं करना चाहिये। इससे दूसरा तीर्थ मुक्ति देने वाला कोई नहीं है ॥६८॥ उत्तराखण्ड में जो मुक्ति क्षेत्र है उसका वृत्तान्त हमने सब तुमको सुनाया। पृथ्वी में पापियों के मोक्ष देने वाले तीन तीर्थ हैं ॥ ६९ ॥

अतः पर तरं नास्ति तीर्थं मुक्तिप्रदायकम्।
पृथिव्यां त्रीणि क्षेत्राणि मोक्षदानि च पापिनाम् ॥ ९९

वाराणसी तथा पूर्वंशालग्रामाख्यतीर्थकम् ।
यत्र पुण्यदा नदी श्रेष्ठा गण्डकी नामविश्रुता ॥ १००
मुक्तिक्षेत्रं द्वितीयं तु तद्धि जानीहि नारद ।
यां श्रुत्वा सर्व पापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ॥ १०१
पुण्यं यशस्यमायुष्यं पापघ्नं सर्वकामदम् ।
साख्यानं कथितं ते वै वाराणस्यास्तु वैभवम् ॥ १०२

-०-०-०-

इति श्रीस्कान्दे महापुराणे केदारखण्डे सौम्यवाराणसी-
महात्म्यं पञ्च नवतितमोऽध्यायः

—❀—❀—❀—

पूर्व में बनारस दूसरा शालिग्राम तीर्थ जहां सब नदियों में श्रेष्ठ पवित्र गण्डकी नदी है ॥१००॥ हे नारद ! दूसरा मुक्ति क्षेत्र उत्तरकाशी जान जिसका श्रवण करने से मनुष्य पापों से छूट जाता है ॥ १०१ ॥ यह हमने तुमको पवित्र कीर्ति बढ़ाने वाला आयुकारक पापनाशक उत्तरकाशी का महात्म्य इतिहास पूर्वक सुना दिया है ॥ १०२ ॥

इति श्री स्कान्दे महापुराणे केदारखण्डान्तर्गत सौम्य-
वाराणसी महात्म्ये भाषा टीकायां तृतीयोऽध्यायः ।

—० ॐ ०—

सत्य बोलने से जय

❀ भजन ❀

बाबा काली कमली वाले धर्म के अवतार हो ।
तुम्हीं ब्रह्मा तुम्हीं विष्णु, तुम्हीं शिव साकार हो ॥ टेक
ऋषीकेश की ऋषिभूमि में, आसन जमाया आपने ।
सन्तों के भोजन के लिये, लंगर खुलाया आपने ॥
गंगा का जल अमृत समझ, सब को पिलाया आपने ।
इसलिये काली कमली वाला, नाम पाया आपने ॥
सत्य के हो देवता तुम, अन्न के भण्डार हो ॥ १
पाठशाला, औषधालय, वाचनालय भी खुला ।
पठन – पाठन और दवा से, हो रहा सब का भला ॥
साधु – संन्यासी, उदासी, योगी हो या निर्मला ।
सब को मिलता नित्य भोजन, जो कोई आवे चला ॥
गऊ सेवा हित कमलीवाले तुम्हीं कृष्णमुरार हो ॥ २
आपके सेवक सभी आये हैं सेवा भाव से ।
तन से, मन से, बचन से, सेवा करें सब चाव से ॥
पेश ना आवें किसी से, छल, कपट, अरु दाव से ।
सबके हित चिन्तक बनें कोमल व सरल सुभाव से ॥
सत्य पर जो है अटल बस उसका बेड़ा पार हो ॥ ३
उत्तराखण्ड में यात्रा चलती है चारों धाम की ।
धर्मशाला सब जगह पर खुल रही आराम की ॥
ठहरने और बरतनों की है व्यवस्था आम की ।
प्रार्थना ऋषिराज की होती सुबह और शाम की ॥
सत्सङ्ग, कीर्तन से सदा, मुख रामनाम प्रचार हो ॥४

रजिस्टर्ड हितचिन्तक औषधालय की औषधियों की सूची

हिमालय की जड़ी बूटियों से निर्माण

हित चिन्तक च्यवन प्राश रसायन

बल, वीर्य, सौन्दर्य, श्वास, कास, प्रतिश्याय, स्वरभंग, राजयक्ष्मा, फेफड़े की खराबी, हृदय रोग, स्मरण शक्ति वर्द्धक, दीर्घ जीवनप्रद, बालक, युवा, वृद्ध तथा स्त्रियों के लिए परमोपयोग्य है। मात्रा १ तोला दुग्ध के साथ।

०— ब्राह्मी घृत —०

उन्माद स्मृति, दौर्बल्य मस्तिष्क रोग, रक्तविकार, बवासीर, गुल्म कास, प्रमेह तथा स्त्रियों के सर्व रोग हर बलवर्ण अग्नि को बढ़ाने वाला है। मात्रा १ तोला।

- त्रिफला घृत *-*

आंखों के समस्त रोग जैसे—आंखों में खुजली, कम दीखना, रात को न दीखना, आंखों से पानी गिरना, ललाई आदि नेत्रों के दोष हटा कर नेत्र की ज्योति बढ़ाता है। मात्रा १ तोला।

* ब्राह्मी तैल *

ब्राह्मी, आंवला, भृङ्गराज इत्यादि औषधियों से निर्मित मस्तिष्क सम्बन्धी सर्व रोग हर शिरशूल निद्रा की कमी हटाकर बालों की सौन्दर्यता वर्द्धक है।

=० द्रा क्षा स व ०=

दुर्बलता, खांसी, दमा, गले के रोगों में अमृतवत है।

कौमार स्वास्थ्य वर्द्धक पानक

यह बच्चों की घुट्टी हिमालय की ताजी जड़ी बूटियों से निर्माण शिशुओं के सम्पूर्ण रोग नाशक पौष्टिक पेय है। मात्रा—५ से १० बून्द तक जल मिश्रित या माता के दूध से।

महान पौष्टिक स्मरण शक्ति सुकुमारता तथा उत्साह आदि को बढ़ाता है। मात्रा २ तोला दुग्ध से।

॥ व ज्र द न्ति का ॥

यह मञ्जन सर्व दन्त रोगों को दूर कर दान्तों को उज्वल और मजबूत करता है।

हरि हिमांशु चूर्ण [चाट]

यह स्वादिष्ट चूर्ण अजीर्ण, मन्दाग्नि इत्यादि रोगों को हटा कर पेट साफ रखता है।

* सोमवल्लकादि नस्य *

सिर दर्द, जुखाम, तन्द्रा, बेहोशी आदि रोगों को दूर करता है।

हितचिन्तक लवणभास्कर चूर्ण

अजीर्ण, अतिसार, मन्दाग्नि, उदरशूल, वायु गोला तथा पेट के सम्पूर्ण रोगों के लिये विशेष हितकर है। ३ से ६ माशे तक।

०-* हिंगाष्टक चूर्ण *-०

अजीर्ण, अफारा, उदरशूल आदि के लिये रामबाण है मात्रा-२ से ३ माशे तक।

—० श्री पुष्पादि वटी ०—

कफ, कास, छाती व पसली का दर्द नाशक तथा मुख के रोगों को हटाता है। मात्रा १ गोली से ३ गोली तक मुख में रखें।

-* महा ज्वरांकुश *-

हर किस्म के बुखारों को जड़ से हटा कर पेट भी साफ करता है। मात्रा १ गोली से ३ गोली तक गर्म पानी से।

००- सुदर्शन चूर्ण -००

हर किस्म के बुखारों को हटाता है। तिली जिगर की खराबी वायुगोला नाशक। मात्रा-३ से ६ माशे तक जल के साथ।

:-][सितोप्लादि चूर्ण][-:

मन्दाग्नि, श्वास, कास, जिह्वा के रोग, ज्वर, हाथ-पैरों की दाह, को हटाने वाला। मात्रा-१॥ माशे मधु के साथ।

०⬭ शतपुष्पादि चूर्ण ⬭०

अजीर्ण, यात्रा में बदहजमी से तथा जगह २ के पानी पीने से पेचिश आदि हो जाती है उसे दूर करने के लिये यह खास दवा है। यात्रा में नित्य सेवन करने से पानी लगने का भय नहीं रहता। मात्रा-३ माशे से ६ माशे तक जल से सेवन करें।

() वन मक्षिका विष हरण तैल ()

यह तैल हरएक विषैले जानवरों के काटने में तथा हर किस्म के दर्दों को मालिश करने से ही दूर करता है।

यहां पर उपदंश (गर्मी) का शर्तिया इलाज होता है।

सूची मुताबिक औषधियों के अतिरिक्त हमारे औषधालय से सर्व प्रकार के आसव, अरिष्ट, तैल, घृत, अवलेह, वटीका चूर्ण, गुग्गुल तथा सब किस्म की भस्में रस-धातु-उपधातु आदि हर समय तैयार रहते हैं उचित मूल्य पर मिल सकती है विशेष आज्ञानुसार मांग के मुताबिक औषधनिर्माण कर सेवा में प्रस्तुत की जा सकती है।

औषधि मिलने का पता—

वैद्य सूरतराम, अम्बिकाप्रसाद जोशी

रजिस्टर्ड, हितचिन्तक, आयुर्वेद औषधालय

उत्तरकाशी, टिहरी गढ़वाल (यू० पी०)

तीर्थ गंगा जी हरिद्वार से श्री केदारनाथ, बद्रीनाथ, गंगोत्री यमनोत्री

— यात्रा का मार्ग —

मुकाम	मील
तीर्थ हरद्वार से आरम्भ	
सत्यनारायण	७
ऋषिकेश	७
देवप्रयाग डाक बंगला तीर्थ संगम	४४
श्रीनगर व०	२४
रुद्रप्रयाग संगम	२१ व.

यहाँ से श्री केदारनाथ जाने के लिये मोटर बदली जाती है।

अगस्तमुनी	११ व.
गुप्तकाशी विश्वनाथ दर्शन गुप्तदान	१३ व.

यहांपर हम या हमारे आदमी हरसमय रहते हैं। यहांसे पैदल यात्रा होती है। पैदल मार्ग—

	मी० फ०
नाला	१
नारायणकोटी	१–२
व्यूग	१–६
भैंखण्डा	१–६
फाटा व.	१–२
बदलपुर	३–२
रामपुर	१–६
सीतापुर	१–
त्रियुगीनारायण	३–४
गौरीकुँड व.	५–
चिरपटिया भैंरो	१–४
जंगल चट्टी	–४
रामबाड़ा	१–६
श्री केदारनाथ धाम	३–२

ज्योतिर्लिंग दर्शन हंस कुँड पिण्डदान उदक कुण्ड रेतस कुण्ड मार्जन श्रावणी कर्म ब्रह्मकमल रुद्राऽभिषेक षोड़श उपचार पूजन भुकुण्ड भैरव आदि दर्शन, पोस्ट–तारघर–अस्पताल।

पूर्वोक्तमार्ग से वापिस नाला चट्टी २३ मील

ऊखीमठ व.	२–६
युव चट्टी	–६
कंथा	२–२
ग्वालिया वगड़	१–६
दैड़ा	१–
गौंद	–४
पोथीवासा	१–४
दोगलभीटा व.	१–६
वनिया कुण्ड	–६
चोपत्ता	१–

यहां से चढ़ाई चढ़ कर तुङ्गनाथ ३ मील

भूल्कवाना	१–२
पाङ्गरवासा	२–४
मण्डल व.	३–४
बैरागना	२–
गोपेश्वर	४–२
चमोली व.	१–६
मठ	२–
छिनका	१–४
सियासैन	३–
हाट	१–
पीपलकोटि व.	२–
गरुड़ गंगा	४–२
टङ्गनी	२–२
पाताल गङ्गा	२–
गुलाव कोटि	२–२
कुमार चट्टी	३–४
पैनी	१–
खनोटी	१–
झड़कुल्ला	१–

सिंहधार २–
जोशीमठ व. १–१
विष्णु प्रयाग २–
वालदौड़ –६
घाट २–२
पाण्डुकेश्वर व. २–
विनायक १–२
लामवगड़ १–६
हनुमान चट्टी ३–
श्रीबद्रीनाथ जी ५–
पूर्वोक्त मार्ग से वापस जोशीमठ
यहां से कोटद्वार या हरिद्वार को मोटर जाती है।

गंगोत्री मार्ग

ऋषिकेश से धरासू८०
डण्डीयाल गांव २६
यहांतक मोटर जाती है
गंगाणी४यहां बंगलाहै
जमना चट्टी ६–
सणाचट्टी४यहांबंगला है
हनुमान चट्टी ४–
फदल चट्टी ३ पोस्ट
जानकी चट्टी १ यहां पर बंगला है।
जमनोत्री ४ पोस्ट
(वापस) गंगाणीचट्टी वापस
गंगाणी २२–
सिंघोट ६–
उत्तरकाशी ६ पो.
मनेरी ६ यहां बंगला है भटवाड़ी ६ पोस्ट
गंगनानि ६ यहां बंगला है सुक्की ६ पो. झीला ३ यहां बंगला है।
हरसिल पो. ३ यहां,, बंगला, थराली ३–
भैरोघाटी ६–४
गंगोत्री ६–४
(वापस. भटवाड़ी वा.
भटवाड़ी ४० मील
यहां से केदारनाथ को रास्ता जाता है।

भटवाड़ी केदार मार्ग

मल्ला २–
सारङ्गगढ़ ३–
फियालू २–४
छून ३–
वेलक ५
पाङ्गराना ५
झल्ला ५
बूढ़ाकेदार ५
टोल ४
हड कुण्डी ३
भोट २–४
कोपड़ा ३
घुत्तू ५
गमान
दोफन्द ७
पवाली ३
मग्गू ६
त्रियुगीनारायण ५
गौरीकुण्ड ५

* सम्मति *

श्रीमन्त सूरतराम शर्म्माणो वेदपाठिन आयुर्वेदभूषण महोदयाः सुयोग्या विद्वांसः सन्ति शुभे श्रीउत्तरकाशीमहात्म्य लेखने व्यापृताः ।

न खलुमहात्म्य ज्ञानमन्तरा भवत्युपादेयेप्रवृत्ति कस्यापि वस्तुनस्तदत्र तीर्थराजविषयेऽपि सैवास्ति परिस्थितिः । त्रिभुवन-पावनकारणभूताया भव्यभावोद्भाविन्या भगवत्या जगज्जन्या जाह्नव्या उद्गमनलीलाक्षेत्रस्या लङ्कार भूताया उत्तरकाश्या महात्म्यं पठितं लेखकमहोदयस्य श्रमस्तुत्यः प्रतिभाति भूत भावनं भगवन्तभभ्यर्थये यथास्य स्यान् महीयान् प्रचारः सनातन धर्मिभि चाधिकतमो विचारो जनतायः ।

लीलाधर शास्त्री, प्रधानाध्यापकः ऋषिकुल हरिद्वारम्

२—वेदपाठी तीर्थ पुरोहित सूरतराम जोशी वैद्यभूषण ने उत्तर-काशी महात्म्य जिसका वर्णन स्कन्द पुराणान्तर्गत केदारखंड में है उधृत कर यात्रियों के हित के लिये प्रकाशित किया है । इसके साथ २ गङ्गोत्री, यमुनोत्री, केदारनाथ, बद्रीनाथ तथा मान पथ प्रदर्शिका चित्रपट भी दिया गया है । पंडित जी ने बड़े परिश्रम से इस पुस्तक को तैयार किया। भगवान विश्वनाथ जी की कृपा से पुस्तक पाठकों को यात्रा में सफल सिद्ध होगी ।

राजगुरु हरिदत्त शास्त्री, देहरादून ।

हमारे यहां हर बिमारी के आयुर्वेदिक इञ्जक्शन लगाये जाते हैं तथा होमियो पैथिक इलाज भी किया जाता है ।

—: चिकित्सक :—

पं० विशम्बरप्रसाद जोशी, एम० डी० एच० आयुर्वेद विज्ञान शिरोमणि सुचिवेद विशारद, उत्तरकाशी जि० उ० का०

❁ श्री केदारनाथ उत्तराखण्ड यात्रा मार्ग ❁

श्री केदारनाथ बद्रीनाथ के फाटक १ मई से १२ मई के अन्तर्गत खुलते हैं और १ से १२ नवम्बर के अन्तर्गत बन्द होते हैं। सम्पूर्ण यात्रा के प्रत्येक २–३ मील पर ठहरने को चट्टियां हैं और उनमें खाने पीने को राशन व बर्तन भी मिल जाते हैं। यात्रियों के कहने पर उनके लिये कुली, डन्डी, कन्डी घोड़े का भी इन्तजाम होता है। और एक आदमी को भी हम यात्री के कहने पर साथ दे देते हैं जो कि सारी यात्रा में सर्व प्रकार की सेवा करता हुआ यात्रा करता है। केदारनाथ की यात्रा में अभी २४ मील तथा बद्रीनाथ की यात्रा में १८ मील पैदल मार्ग है। और श्री केदारनाथ को रुद्रप्रयाग से रास्ता जाता है। श्री बद्रीनाथ से वापिस जोशीमठ तक १९ मील आना होता है यहां से सीधे मोटर मार्ग पौड़ी होते हुये कोटद्वार या श्रीनगर होते हुये ऋषिकेश पहुंच जाते हैं।

* हित चिन्तक स्वादिष्ट चूर्ण *

यह चूर्ण अजीर्ण, अतिसार, मन्दाग्नि आदि को हटाकर कब्ज को साफ करता है भोजन के पश्चात या जब आप चाहें सेवन कर सकते हैं।

मात्रा ३ से ६ माशा तक।

हितचिन्तक आयुर्वेद औषधालय (रजिस्टर्ड)

उत्तरकाशी, टिहरी गढ़वाल (यू० पी०)

मुद्रकः— हिन्दू इलैक्ट्रिक प्रेस, हरिद्वार।